# भूमिका

"नाश काले विपरीत बुद्धि" यह उक्ति अक्षरसः सत्य हान पर भी हमें सतर्क कर देनी है। परन्तु " विनाश काले। विपरीत बुद्धिः" इस सिद्धान्त को न मानने का कोई भी साहस नही कर सकता। उल्टी यह मूर्खता, अविवेकता, कार्य की सफलता का उलटा रूप वना देती है। अमुक ने अपनी मूर्खतासे ही उस कार्य को बिगाड़ डाला। ऐसा हम नित्य कहते व सुनते आते हैं। परन्तु उस का काल निकट था इसी से उसकी मति भ्रष्ट हुई। इस बात को वे मनुष्य जो कर्मफल की मीमांसा को नहीं समझते, नहीं मान सकते। किन्तु सांसारिक पतन में यह यह परम्परा देखी गई है कि जब कोई व्यक्ति मूर्खता करता है, तो उसे कार्य में सदा क्षति ही प्राप्त होती है। लगातार हानि से वह मनुष्य ज्ञान शून्य हो जाता है।

कंस के जीवन में भी यही सिद्धान्त चरितार्थ होता है। उसके राज्यकाल में स्वेच्छाचार, अत्याचार का खुल्लम खुल्ला प्रचार रहा। जब अन्याय की मात्रा पूर्ण हो गई, तो उसी की शाखाओं से उसी का प्रतिकार अंकुर उत्पन्न होने लगा।

प्राचीन काल की कोई भी घटना ऐसी नहीं है जिससे ब्राह्मण चरित्र का परिचय न मिलता हो। धर्म हो वा अधर्म, न्याय हो वा अन्याय; सर्वत्र ही ब्राह्मण की महान् चेष्टाओं का परिचय मिलता है। कंस को अनेक बारसमझाने पर भी जब नारद कृत कार्य न हुये, तब उन्होंने कंसको इति श्री का बीड़ा उठाया।

प्रजा का अधिकाँश भाग कंस के विरुद्ध हो गया था। उग्रसेन के प्रतिपक्षी वसुदेव के सुहृद तो उसके शत्रु ही बन बैठे थे, परन्तु कंस की राज्य-शक्ति के सन्मुख हतोत्साह हो रहे थे। धीरे २ प्रजासंघ की बातें कंस के कानों तक भी पहुंच गईं। कृष्ण की

मृत्यु के लिये वह पहिले से ही व्याकुल था। परन्तु अब उसे स्पष्ट ज्ञात होने लगा "कृष्ण का जीवित रहना उसके राज्य की हस्ति के लिये अशुभ है।"

इधर कृष्ण बलराम से बड़ी २ आशायें की जाने लगीं। उन को केन्द्र बनाकर, जनता मे परिधि का आविष्कार होने लगा। ज्ञात होने पर कंस ने उनका वध करना ही निश्चय किया।

कंस के विरुद्ध प्रजा का द्वेष बढ़ता जा रहा था इसी से, उस ने प्रगट रूप से उनका वध करना उचित न समझकर गुप्त रूप से उनकी हत्या करने के लिये पूतना नाम्नी एक दुष्टा स्त्री को नियत किया। परन्तु वह भी, उनका बाल बांका न कर सकी।

क्या कंस कुछ सैनिक लेकर उन ग्रामों को नष्ट करके दोनों बालकों का वध नहीं कर सकता था? पूतना से वध कराने की क्या आवश्यकता थी? इसका उत्तर बहुत सहज है। कंस के विरुध अनेक षडयन्त्र हो रहे थे। प्रजा विप्लव के भय से ऐसा करने का साहस नहीं कर सकता था। इसी कारण से वह किन्हीं अन्यों के द्वारा हत्या कराने के लिये प्रयत्न कर रहा था।

कंस सदा चिन्तित रहता था, उसे अपने राज्य का अस्तित्व रखना असम्भव सा प्रतीत होता था। "प्रजा में राज विद्रोह फैल रहा है। राज विद्रोही प्रजा की आशा केवल दो बालकों पर है, वे ही नेतृत्व की रक्षा कर रहे हैं" यही विचार कंस के मानसिक जगत की परिक्रमा कर रहे थे।

जब कंस की समस्त चेष्टायें निष्फल हो गई तब उसने दूसरी प्रकार का षडयन्त्र रचा। कृष्ण को अपने यहां निमंत्रित कर उसका वध कराने का उपाय निकाला। एक बड़े उत्सव की रचना की गई, जिसमें मल्लयुद्ध करना निश्चित हुआ।

कुछ आत्मीय जनों को छोड़कर कंस को किसी से भी

पनी सहायता की आशा न थी। इसी कारण से कंस अत्यन्त भयभीत हो गया। कंस ने अक्रूर से दीन की भांति गिड़गिड़ा कर विनय की।

हे दानपति! अक्रूर तुम ही हमारी मित्रता का कार्य करो, क्योंकि इस समय मेरा कोई भी हितु नहीं है। अब तुम ब्रज में जाकर शीघ्र ही कृष्ण बलराम को रथ पर बैठाकर ले आओ। काल केसमान हाथी उन्हें मार डालेगा। पागल हाथी उन्हें मार डालेगा; मुझ पर कोई सन्देह भी न करेगा।

इस प्रकार के अभिप्राय से प्रगट होता है कि कंस की प्रजा उसके कितनी विरुद्ध थी। और वह भी बड़े २ षड्यन्त्र गुप्त रूप से रच रहा था। कंस के विरोधी ग्रामों में, नगरों में, राजपुरुषों में तथा उग्रसेन व वसुदेव के प्रतिपक्षियो मे ही न थे, वरन कंस के अन्तः पुर में भी थे। जिसका ज्वलन्त उदाहरण कंस के महल की कुब्जरी दासी है।

इन सब बातों से परिणाम निकलता है कि राजा को सदैव अपनी प्रजा को अपने वश में धर्मानुसार करना उचित है अन्याय करके प्रजा को दबाना सर्वथा भूल है।

अन्त में हमें कुछ शब्द लेखक के परिश्रम के सम्बन्ध में कहने हैं। प्रारम्भ से अन्त तक पाठ करने से पाठकों को स्वयं ज्ञात हो जायेगा कि लेखक ने भागवत् सम्बन्धी गाथा जानने में कितना परिश्रम किया है।

लेखक महोदय ने कुटिल राज्य नीति का जीवित जागृत चित्र इस पुस्तक में अंकित किया है। आत्मिक बल द्वारा जो सच्ची विजय पापी; आत्माओं पर, धर्मात्मा लोग पाते हैं, इस का इसमें भली प्रकार निरूपण किया गया है।

नाटक साहित्य में बड़े सन्मान की दृष्टि से, सदैव देखे गये हैं। परन्तु इस समय कुछ भद्दे नाटक प्रकाशित होने से उच्च कोटि के नाटकों की ओर जनता का ध्यान कम रह गया है। संस्कृत के नाटकों के पठन करने वाले नाटकों के मर्म को भली प्रकार समझते होंगे।

हमें अन्त में इतना और कहना है कि आगामी समय में श्री० वशिष्ठ जी कविताओं की ओर विशेष ध्यान देंगे। हम हिन्दी जगत में उनके नाटक का हृदय से मान करते हैं। हमें पूर्ण आशा है कि हिन्दी जगत श्री० वशिष्ठ जी के परिश्रम की सराहना करता हुवा उनकी लिखी पुस्तक को अपनावेगा।

---

मयराष्ट्र नगर<br>कार्तिक सम्वत् १९७१

विश्वम्भर सहाय<br>"प्रेमी"

## मुख्य पुरुष पात्र

नारदः—वीतराग महर्षि
मदनः—नारद का शिष्य
वसुदेवः—श्री कृष्ण के पिता,
कंसः—मथुरा का राजा
कृष्ण } —वसुदेव के पुत्र
बलराम }
वेणु नाथः—वसुदेव का सेनापति
अक्षय कुमारः—वेणुनाथ के पुत्र
विमलः—कंस का भतीजा
सूरसैनः—लक्ष्मी का पिता
राहुकः—सुजला का पिता
कुम्भः—कंस का आधीन राजा
मुष्टिकः—एक योद्धा
चाणूरः—एक सेनाध्यक्ष
सुमन्तः—विमल का पुत्र (बालक),

## स्त्री पात्र

देवकीः—कृष्ण की माता
यशोदाः—नन्द की पत्नी, कृष्ण की विमाता
सुजलाः—राहुक की पुत्री, विमल की स्त्री
लक्ष्मीः—अक्षय कुमार की पुत्री
सुन्दराः—लक्ष्मी की माता
कमलाः—अक्षय कुमार की बहिन

ओ३म्

# अत्याचार का अन्त

परिचय

## स्थान--वनपथ समय--उषाकाल

देवगण तथा भारत माता का आर्यावर्त्त की

अधोगति पर पश्चात्ताप ।

गान

अखिल तोरी महिमा करुणाधार ।

करहु कृपा, जासों हमरी टेक टिके तरन तारन हार ।

जगदीश तू ही, है रजनीश तू ही

दिन ईश तूही, है सबको स्वामी ।

ओ३म् निरन्तर नाम तिहारो

हो घट २ में अन्तर्यामी ।

हम आकुल हैं, अति व्याकुल हैं

कर दुख भंजन, दुख भंजन हार ॥ १ ॥

भारत हीन क्षीण मलीन भयो
तज निज मत्सर को।
हो जनता के मन ध्यान हमारो
कर इस अवसर को॥
विनती सुन लीजे, दया अब कीजे
भारत गौरवता की नैया लगे पार॥ २॥

धर्म:—प्रलय हो जाय, अब प्रलय हो जाय संसार से इस पृथ्वी का अस्तित्व मिट जाय। विधाता! आज संसार में पाखंड ने पाखंड रचाया है, तभी तो मेरा नाम मिटाया है। पृथ्वी पर मत मतान्तर, पंथ पथाव फैल गये। संसार को शान्ति देने के लिए ग्रन्थों की भीड़ लगने लगी। परन्तु शान्ति तो क्या? शान्ति के रहस्य को भी न समझे, फिर शान्ति?

शान्त कर सकता नहीं वंचन का हृदय अशान्त।
क्या उजाला कर सके, है जो स्वयं अन्धेर मे॥

लज्जा:—शान्ति! शान्ति तो भारत के अशान्त होते ही शान्त हो गई। जिसने संसार की प्रश्नावली को हल किया, चलायमान हृदयों को शान्त किया, जिसने सच्ची शान्ति के अस्तित्व व अनादित्व स्वरूप को पहिचान कर शान्ति की गोद में आनन्द का पीयूष पिया, आज वह भारत अपनी स्वाधीनता स्वजनता, व स्वधर्म को खोकर अशान्त व क्लान्त हो रहा है, फिर शान्ति कौन दे?

लाज का अपवाद करके धन कभी मिलता नहीं ।
उलट फेर पा नकलें भये मूरख कहीं जट काटकर ॥

शान्तिः—दूगी, शान्ति दूगी दग्ध हृदयों को शान्ति दूगी । ससार के स्वार्थी हिंसक मनुष्यो ! आवो भारत मे रत्नों को खोजो, अपना अग्रसर बनाकर आवो, परन्तु कहां ? तुम कब आने लगे ? दैव ! मेरे कभी के बिछोये आज भारत रत्न कहाँ हैं ? (लज्जा से) मुझको भारत ने खोकर बहिन तुम्हारा ! बडा अपमान किया ।

लज्जाः—ऐसा तो होना ही था ।

जिनको सुध ना निज नाम की कुछ ?
वह लाज को आप बिसार गये ।
तब आग लगी तन झुलस गया,
कपडे अपने सब फाड गये ॥
लाज की टेक टिकेगी कहां,
जब शान्ति हृदय मे वास नहीं ।
हुवा आकुल व्याकुल भूख से जब,
तब भूखे के नष्ट आचार भये ॥
लाज कहा भई मेट दना,
तब शान्ति हृदय सो निकस गई ।
मन नग भई सब हिंस हुवे
अरु प्रेम के तार भी टूट गये ॥

दया:—स्वार्थी को दया ! अपना ही अपना भला जब सूझने लगा तो दूसरों पर दया किसे आती ? अपना भला छोड़ कर दूसरो को लाभ पहुंचाये, स्वार्थी की इतनी छाती ?

काम बने अपना २ चाहे गैर के सिर पै कुठार चले ।
स्वारथ के पुतलों को भला, अवकाश, हो जाय जो काम भले ॥

एकता—एकता, अनेकता, हाय देश ! मेरे महत्व को भूल कर मेरे लक्ष्य को चूक कर आज तू धूसर-शायी पद-दलित हो रहा है। परतन्त्रता की बेड़ियों में आठ आँसू रो रहा है।

क्यो न बने श्मशान वहा जिस देशके खण्ड अनेक भये ।
क्यो न गिरे वह समाज भला सिर मौर जहा अविवेक हुवे ॥

लक्ष्मी :—मेरेही लिए स्वार्थी बने अधर्मी बने दया प्रेम को तिलाँजली दे छिन्न भिन्न भये। हायरे भारत संतान !

ला धन दे धन ला धन ही धन लक्ष रहा तुमरा ।
रोग की औषधि ज्यों २ करी त्यों २ ही रोग बढा तुमरा ॥

सत्य —जिस वस्तु पै लक्ष्य रहे जिसका वस ध्यान उसी का आता है।
उस ही का ध्यान करे केवल अरु ध्यान सभी विसराता है ॥
सत्य विवेक न्याय लज्जा चलता आगे को त्याग सभी ।
हो सिद्ध मनोरथ जिनसे उसका वस उनको ही अपनाना है ॥

सरस्वती:—शान्ति, सत्य, धर्म, ऐश्वर्य कैसे पृथ्वी पर हो और कैसे भारत स्वर्ग बन जाय ? इसके लिए हमें बुलाया है या कोई मौखिक तर्क करने के लिए उत्सव रचाया है।

धर्म:—हां ! अब विचार करना चाहिये कि कैसे भारत सन्तान फिर से गोतम कणाद के सदृश विद्वान्, हरिश्चन्द्र की तरह सत्यवादी, भीष्म की तरह बलवान्, कुवेर की तरह धनवान्, राम मर्यादा वाली तथा शिव शान्त बने। क्योंकि बिना इसके उठे संसार नहीं उठ सकता, बिना इसके जगे संसार नहीं जग सकता।

भारतमाता:—हा ! विधाता !

नाव भारत की है जिन खेवटों के हाथ मे।
वह भी अब तूफान में आ तैरना ही पूछते॥
जिनके, कर दिया था साथ में, अज्ञानियों के मोह को।
हो मार्ग दर्शक भूलकर हा ! मार्ग अपना ढूढते॥
जिस चादनी मे देखता ससार है रजनीश को।
परमाणु जाके चादनी के चाद को ही पूछते॥

धर्मराज ! आपको धारण करके ही भारत सतान ससार की सिरमौर बनी, सरस्वती को धारण कर जगतगुरु बनी, लक्ष्मी की कृपा से संसार में ऐश्वर्य शालिनी बनी। हाय ! आज आपकी ही टुक मेहर न होने से मैं यों स्वार्थियों, म्लेच्छों तथा विदेशियों से पददलित हो रही हूं—हे वीर

सागर! आ, आ, तू आ और हिमालय, नहीं २ मानसरोवर को अपने में मिला ।

धर्मः—वहिन! इस तरह अधीर मत वनो। जिस तरह होगा भारत संतान का हित होगा, वही करूंगा।

भारतमाताः—आप दयालु हैं, कृपा सिन्धु हैं, मैं दुखिया हूं मेरे पुत्र आज पराधीन हैं, उदासीन हैं, दुखी है। अन्यों के चगुल में है। घवराये हुवे हैं, डरे हुवे हैं, उन्हें सदेशा दो, धैर्य दो उन्हें स्वतंत्र वनने का गुरु मंत्र सिखादो।

धर्मः—यही तो सोच रहा हूं।

भारतमाताः—कव तक सोचोगे? क्या मेरी संतान का रोग असाध्य हो गया? धर्मराज!

धर्मः—नही वहिन! साध्य है, विल्कुल साध्यहै। कस के अत्याचार को नाश करने में, कृष्ण ने वाल्यावस्था में किस महा-मन्त्र का उपयोग किया था—याद है?

भारतमाताः—याद है। खूव याद है। किस प्रकार किशोर वालक ने उस महान् अत्याचार का अन्त किया।

धर्मः—क्या उसी अत्याचार के अन्त को स्मरण करके, कृष्ण की वालजीवनी से अपना जीवन रंग कर, भारत की संतान पराधीनता के पाश से मुक्त न हो जायगी?

भारतमाताः—अवश्य होगी धर्मराज! उसी महान् मंत्र को सुनावो धर्मराज!

धर्म:—मैं आज ही से इस कार्य में लग जाऊंगा। भारत के नर नारी, बालवृद्ध को उस महान् मन्त्र को सुनाऊंगा।

भारतमाता:--सुनावोगे ! सो किस प्रकार ? क्या भागवत् की मनोरंजक कथावों को सुनाते फिरोगे ?क्या मेरे लाल कृष्ण को नचाते फिरोगे ? क्या उस महात्मा के चरित्र को लजाते फिरोगे ! बतावो ! बतावो धर्मराज ! बतावो! इस नष्ट भ्रष्ट भारत संतान को जिसने मेरे कृष्ण को लपट व्यभिचारी मान रक्खा है कैसे पथ दिखावोगे, कैसे कृष्ण जीवनी सुनाओगे धर्मराज ?

सत्य:--कथायें तो मन बहलाने का साधन होगई हैं। अफीम की पीनक में, धूम पान की मंडली में, भंग की गङ्गा में कथायें बादल की परछाईंवत आती हैं और बरसाती जल की तरह बह जाती हैं।

प्रेम:--( भारतमाता से ) माता ! कथाओं का युग बीत गया नूतन पुष्प पल्लव खिल रहे हैं, ऊंघने वाले पुरुष धूवें की रेल पर कथा सुन रहे हैं। परन्तु कृष्ण का चरित्र सदा पीठ पीछे ही रहता है। ( धर्म से ) भगवन् ! क्या विचार किया है—भक्ति रस से अन्धी, भारत संतान कृष्ण के स्वरूप को उसकी बालजीवनी को नहीं पहचानती, नहीं स्मरण करती।

धर्म:—कमल पुष्प की बंद कली के सदृश कृष्ण के बालजीवन को पुष्प रूप बनाना होगा। गुथी हुई सूत्रराशि को वस्त्र रूप करना होगा। संसार का स्रोत आज दूसरी ओर बह रहा है। रस वासनावों में मनुष्य जगत् डूब रहा है। जैसे शराबी को शराब के मिस से औषध देते हैं।

तैसे आज भारत संतान को उस की भावना से ही उपदेश देना होगा। रंगमञ्च पर, नाट्यमञ्च पर भारत संतान को कृष्ण का स्वरूप दिखाना होगा ( वक्षस्थल म पुस्तक निकाल कर ) कृष्ण की बालजीवनी "की बंद कली का पुण्यरूप यह नाटक है। "अत्याचार का अन्त" यथा नाम तथा गुण यह नाटक है।

( पुस्तक देना )

भारतमाता:-(पढ़कर ) "अत्याचार का अन्त" क्या इसमें कृष्ण के आल्हादजनक जीवन का अभिनय है? इसका लेखक कौन है? धर्मराज!

धर्म.---इस पुस्तक का लेखक मेरा अपरिचित, तुम्हारा अपरिचित, भारत संतान का अपरिचित एक साधारण युवक है। परन्तु लेखक का नाम सुनते ही सतयुग का समय अयोध्या का सौन्दर्य्य, दशरथ की राजसभा, सीता का दुख, लङ्का का राज्य और राम की पंचवटी का दृश्य सन्मुख आ जाता है॥

( कौतुहल से नाम देखती है )

भारतमाता:- कौन है इसका लेखक? जिसके नाम से स्वर्गीय सुख का अनुभव हो जाता है। ( पृष्ट पलट कर पढ़ना ) "लेखक वशिष्ठ" कौन वशिष्ठ? धर्मराज! इस नाम ने तो राम राज्य ही स्मरण करा दिया।

धर्म:---एक साधारण युवक बहन! मनोरंजक रसिक होने पर भी यह नूतन नाटक शिक्षाप्रद है और हर ओर से

मधुवत् मृदु है (भाग्न माता का पुस्तक पढ़ना) बिखरे हुवे व्यक्तियों को सगठित करने में यह चुम्बकवत् है।

भारतमाता --(पुस्तक में से पढ़ कर धर्म स) पहचान लिया धर्म राज! पहचान लिया, यह नाटक बिखरी हुई सतान को संगठित करेगा पदच्युत जाति को गौरवारूढ़ बनायेगा। धर्मराज! तुम्हारे अत्यन्त प्रशंसनीय वशिष्ठ के इस नाटक ने मेरे लाल के बालजीवन की बंद कली को पुष्प रूप करने में भगवान भास्कर का काम किया है, दिनेश का काम किया है, सूर्य का काम किया है। धर्मराज! अपने प्यारे वशिष्ठ मेरे लाल वशिष्ठ के सूर्य का दर्शन ससार को करावो।

धर्मः—तथास्तु (सब का प्रस्थान)

भाग्नमाता -- हाय! क्या इस दिन के ही लिये मेरी सतान संसार में शिरोमणि बनी थी? क्या मेरी उन्नति के साधन मेरे पतन के ही लिये हुवे थे?

समीर भी था बह रहा मुझको गिराने के लिए
क्या थी रसा भी चुप रसातल को दिखाने के लिए ॥
मेरा वह मध्यान्ह तेज है हा! हाय! अब क्या हो गया।
क्या कोश मेरी करिश्मा का आज सारा खो गया ॥
है, आज मुझको देखता जग हीनता की दृष्टि से।
सब हैं चाहते नाश मेरा ईश! तेरी सृष्टि मे ॥
सतान मेरी का कभी ससार मे उत्कर्ष था।
पर हाय उसका आज ही अपकर्ष है ससार में ॥

हे विधाता! दया करो मुझ दुखिनी पर दया करो।

गौरव मेरा हा! हा! विधाता हो चुका है नष्ट सब।
है दुर्दशा भारी हुई, हुई जातिये है भ्रष्ट सब ॥

हा ! दैव ! मुझको दे बना ये नष्ट होगा कष्ट कब ।
दे फेर करुणा दृष्टि है ये अन्त मेरा सपष्ट अब ॥

[ मूर्छित होकर गिरना, शान्ता और दशा आकर ले जाती है ]

# पहिला अंक ( गर्भांक )

## पहिला दृश्य

स्थान - नारद का आश्रम—समय प्रात काल

[ ऋषिगण हवन कर रहे हैं पुरुके हाथ में
शिर अन्तिम आहुति देते हैं । ]

मन्त्र:--ओ३म् यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैव तदु सुप्तस्य तथैवैति
दूरं गमं ज्योतिषांज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ।

[ खड़े होकर ]

ओ३म् सर्वं वै पूर्णं ॐ स्वाहा ( ( तीन बार बोलते हैं )

नारद —जहाँ तक मेरी बुद्धि निश्चय करती है यही ज्ञात होता है कि अब भारत का ही नहीं किन्तु संसार का अधःपतन

निकट आ पहुंचा। जन समुदाय आत्मज्ञान, ब्रह्मज्ञान को छोड कर, केवल प्रकृति की ही उपासना करने लग गया, नाना प्रकार के भोगवाद सुखसामग्री, शिक्षा, विप तुल्य परन्तु सुन्दर २ यन्त्र कला कौशलों का आविष्कार हो रहा है, सुन्दर सुन्दर यन्त्र कला कौशलों की ओर जन समुदाय खिच रहा है। मनमोहनी वस्तुऐ उन की सुख सामग्री बनी है। माया में जगत फसता जाता है। ब्रह्मज्ञान, आत्मज्ञान तो उन्हें विष तुल्य दिखाई देने लगा है (गौतम मे) गौतम जी! जिन माया के आविष्कारों को वेद भगवान ने अविद्या कहा है। क्या उस माया में फस कर ससार अन्ध कूप में गिरेगा ?॥

गौतम —निश्चय गिरेगा। उपवेदों के ऋषियों ने समाधि मे ही ज्ञान प्राप्त किया, परन्तु आविष्कार कुछ न किया। मुझे जब इन महान् ग्रन्थों के अन्तिम महावाक्यों का ध्यान आता है तो ससार के भविष्य पर खेद होता है।

धौरग —सो किस लिये ?

गौतम —वहां कहा है-'विद्वान लोग इस ज्ञान को जानकर कृतार्थ होवें तथा यत्न करते रहें कि ससार मे कोई रोगी न होवे जिस से आयुर्वेद विदित ओषधियों की आवश्यकता पड़े ऐसा कारण न होने दे जिस से आर्यों का कोई विरोधी हो और उस के नाश हेतु हमें विद्युत के आकाशगामी अस्त्र तैयार करके हिंसा का दोषी बनना पडे। वासनाओं के दास न बने। हम सदा प्रकृति को देखते हुवे तथा उस मे रमते हुवे भी उस के वशीभूत न हो।'

व्यासः—मय दानव तथा विश्वकर्मा ने यन्त्रादि बना बना कर बडा अनर्थ किया। परन्तु अब लोभी जन अनुकरण मात्र से प्रत्येक कार्य यन्त्रों से करते हैं। संसार अब यन्त्राधीनी आलसी व निकम्मा होता जा रहा है।

धौम्यः—आजकल तो मनुष्य मात्र प्रकृति का दास है। एक ऐसी महान् आत्मा की आवश्यकता है जो इस माया मोह से हटा कर सच्चे वेदान्त का उपदेश करे।

व्यासः—अब तो संसार के सब कार्य यन्त्रों से होने लग गये, सेवकों का कार्य भी यन्त्र ही करते है। प्रकृति का दास होने से ज्ञानी अज्ञानी और अहंकारी हो जाता है॥

गौतमः—मिथ्या वेदान्त भी खूब उन्नति करना चाहता है। मदान्ध पाशविक बल के उपासक राज पुरुष एक दूसरे के द्वेषी तथा सुख भोगों के सेवक बन रहे है काम क्रोधांध हो कर उन्हें धर्माधर्म का ज्ञान नहीं रहा॥

नारदः—पिछले वर्ष श्रावण मास में मैंने उग्रसेन के राज महल में छान्दोग्य उपनिषद् की कथा कही परन्तु जो उस समय छटा वहां थी उसे मै वर्णन नही कर सकता। मैं स्वयमेव सोचने लगा ' यहां कथा होगी वा वारांगनाओं का नृत्य ' मुझे भी कथा को रोचक करना पड़ा। परन्तु फिर भी लोगों का मन कहीं और ही भ्रमण कर रहा था—

मंत्री महाशय ने कहा ( अब कथा समाप्त कीजिये )

मुझे बडा संताप हुवा, कहा—" मत्री जी ! मेरी कथा ही नहीं यह राज्य यह सभ्यता और यह भारतवर्ष ही समाप्त हो जायगा " ॥

अरे भानु चमकता और तपता क्या यहा आकाश मे।
देख पश्चिम ओर को, ये आ रहा अब अन्त है॥

धौम्यः—सो ही हुवा—कुल कलंक कंस अपने पिता को राज्य से धकेल कर स्वयं राजा बन गया।

नारद:-देखिये, आत्मा की निर्बलता देखिये ! प्रकृति को दास होने से मनुष्य जगत का आत्म तेज नष्ट भ्रष्ट हो गया ! पिता को धकेल कर पुत्र राजा बन गया परन्तु किसी ने चू तक न की। क्या इस से अधिक निर्बलता भी हो सकती है?

( महर्षि कणाद का एक ब्राह्मण के साथ प्रवेश )

नारद:- ( उठ कर ) आइये ! महर्षि कणाद जी ! अहा भाग्य !

( उठ कर कणाद को अभिवादन करते हैं )

नारद:-कहिये कुशल पूर्वक पहुंचे? आश्रम का क्या समाचार है?

कणाद:—जब भारतवर्ष पराधीन हो जायगा—स्वधर्म स्वदेश, स्वजाति जब न रहेगी,तब कुशल पूछना। नारदजी ! अब तो भारतवर्ष की नौका के चारों ओर अन्धकार की लहरें उमड रही है । पाप के कच्छ मच्छ चारों ओर दौड रहे हैं । विरोध, द्वेष और फूट के चिन्ह भी तली मे हो गये है। अशान्ति, दुख, व्यभिचार और दरिद्रता का मैला काला जल भीतर आने लग गया है, कर्णधार मद्यपान कर रहे हैं और यात्रि गण आनन्दोत्सव में मग्न है।

विश्वामित्र:—( निराशासूचक उपहास ) इस मे आश्चर्य नहीं, ऐसा तो होना ही चाहिये।

है कौन उन्नति शिखर पर, चट आप जो गिरता नहीं ।
लेकर जनम ससार मे, है कौन जो मरता नहीं ॥
सतान भारत की सदा, सत्पथ से गिरती जायगी ।
फिर गई तकदीर इस की, और फिरती जायगी ॥

व्यास:—दशा शोचनीय होती जा रही है।( कणाद से ब्राह्मण का संकेत करके ) आपका परिचय ?

कणाद:—आप महाराजा वसुदेव के पुरोहित है, राजा ने जो सदेशा भेजा है वह आप स्वय कहेंगे।

व्यास:—( ब्राह्मण से ) विप्रश्रेष्ठ ! कहिये आप महाराजा की ओर से क्या समाचार लाये है ?

ब्राह्मण —जब कंस भगिनी देवकी, अपने पति के साथ, रथ पर जा रही थी तो पापी कंस के हृदय में शङ्का हुई कि कहीं इसी धर्मात्मा वसुदेव के वशज मेरे नाश के हेतु न हों।

नारद —पापी कस, दुराचारी कस ! हमारे सैंकडो उपदेशो ने भी तेरे पत्थर के हृदय पर असर न किया, परन्तु पापी की आत्मा, पापी का अन्त.करण स्वय उसे सुझाया करता है, डराया करता है।

चैन दती है कहीं आह निर्बल की भला।
लाल ठण्डी आग बन कर फुकती है लोह को॥

धौम्य --तब उस दुष्ट ने क्या किया ?

ब्राह्मण --वह स्वप्न भी देख चुका था कि देवकी को सन्तान से ही उसकी मृत्यु होगी।

विश्वामित्र.--यदि न होती तो अब जरूर होगी।

ब्राह्मण --यह सोचकर उसने म्यान से तलवार को बाहर किया और निर्दोष देवकी को रथ से नीचे खींच लिया।

विश्वामित्र --ओह ! रे ! रे नीच कुमार्गी !

ब्राह्मण --मारा ही चाहता था कि वसुदेव ने हाथ जोड़ कर विनती की। कारण पूछा पर जब दुष्ट ने न माना तब वसुदेव ने कहा " हे कंस ! यदि तुझे बहने से डर है तो मैं प्रतिज्ञा करता हू कि देवकी की सतान को तेरे अर्पण करूगा"

नारद --( उदास मुख ) और कर ही क्या सकते थे।

ब्राह्मण --महाराजा ने सदेशा भेजा है। आप तत्वदर्शी हैं, उन्होंने कहा है " ऋषि मडली को याद दिलाना कि जब २ धर्म का नाश होता है महात्मा आकर जन्म लेते हैं।

विश्वामित्र --जगदीश्वर ! ( आवेग म टहलते है )

व्यास --( ब्राह्मण स ) विप्रश्रेष्ठ ! महाराज को शान्त बना देना और कहना " हम उपाय करेंगे। वे अपनी सतान कस को देते रहें। और दुखिनी देवकी को धीरज देना कि हम इस कार्य में, इस महान् यज्ञ में, आज से ही जुट गये हैं। अत्याचार को मिटाने के निमित्त हम आज ही आश्रम त्याग देंगे। ( कणाद स ) जहां राज्य अत्याचारी हो, प्रजा अन्याय से त्राहि २ करे, वहां तपस्या होगी ? शान्ति से भगवत् भजन कहां करे ? ब्रह्मज्ञान किसको सिखावे ?

जहा अन्याय हो परजा पै, वहा क्या काम शाति का।

कहीं जलती हुई अग्नि से, होता गात है शीतल ॥

हम जब तक इस अत्याचार को न मिटा देंगे इस आश्रम को वापिस न आवेंगे। वसुदेव से कहना कि कभी कभी महर्षि नारद उन्हें सान्त्वना देने आया करेंगे। जो कुछ नारद जी कहें उन्हे निःसंकोच करना चाहिये।

( ब्राह्मण का प्रस्थान )

विश्वामित्रः--अब क्या सम्मति है? मेरे विचार में तो आज सब चन्द्र लोक चलें। और सुमेरु पर्वत वासी वीतराग महर्षि जनार्दन विष्णु से विनय करें कि वे शरीर त्याग कर देवकी के गर्भ में जन्म लें।

व्यास--ठीक! बिल्कुल ठीक! मेरा भी यही विचार था।

सब--हम सब अनुमोदन करते हैं।

नारद--अच्छा अब चलिए, मेरी कुटि का आतिथ्य स्वीकार करिये।

---

## दूसरा दृश्य

स्थान---कंस के महल का एक बाग---समयः--दोपहर

**देवकी का प्रवेश**

गान

हे हरि, का विपद दई?
का अपराध सो सतति मोरी,
हा! मोसों छिन गई॥
हा! मोरे निर्बोध ललन की
मोहनि मूरत कित गई।
जिय चाहत डूबूं जमुना जल,
धिक् धिक् मुझ पापिन जियई॥

अत्याचारी राज्य भयो है ,
परजा की दुर्गति अति भई ।
करहु कृपा,वेग निहारहु,
गति अति हीन भई ॥

देवकी:—हाय ललन ! हाय बेटा ! तुम कहां गये ? अरे नीच कंस ? मेरे निर्बोध बच्चों ने तेरा क्या बिगाड़ा था ? जो तूने उन्हें चार दिन भी न जीने दिया । आवो ! आवो ! मेरी मन मोहनी मूरतों आवो । हाय मेरे बच्चों ! तुम अपनी मैया को बिलखती छोड़ कर कहां चले गये । ( उद्भ्रान्त भाव मे ) सच कहते हो पिता जी ! मेरे पुत्रों ने तो निरापराध प्राण दिये हैं । हाय ! हा विधाता ! मेरे किस जन्म के पाप का फल है जो मेरा भाई ही मेरी संतान का भक्षक बना । नहीं २ वह मेरा भाई नहीं है । हां ठीक कहते हो बेटा ! ( आकाश को देख कर ) आवो ! आवो ! हां कहां है ? ठीक कहते हो ना ! मेरे बालकों को तो कंस ने खा लिया ! हाय ! मैं कैसी मूर्ख हू जो जरा बात पर दुखी होने लगी । सैकड़ों कंस के सताये तड़प रहे हैं । परन्तु मेरे बालकों ने तो निरपराध प्राण दिये हैं अहा

( वसुदेव का टोकरी में अपने पुत्र की लाश लिये प्रवेश )

गान

वसुदेव —बतादे हरि ! कोई यतन नवीन ।
निरपराध संतान हा मेरी,कंस ने कीनी क्षीन ।
ता दुख से दुर्भाग्य पिता की, हो गई मति सब हीन ॥
त्राहि त्राहि प्रजा करती है, होकर कंस अधीन ।
भेजो किसी भक्त अपने को, है हम दुखी अति दीन ॥

वसुदेव.—है शक्ति ? किसी जिह्वा में है शक्ति ? जो उस पिता के दुखों को बतादे, जिसकी आंखो के सामने-जिस के हाथों मे , उस के प्राण से सींचे हुवे-उस के हाथसे पाले हुवे पुत्रों का-नवजात शिशुवों का सिर कटा हो । बेटा ! मेरे सर्वस्व ! ( शव को छूना चाहते हैं ' हटकर ) नही बेटा मुझे तुम्हारे छूने का भी अधिकार नही । ऐसा कौन पिता है ? जो अपनी सतान को इस तरह मारा जाता देखे और कुछ भी प्रयत्न न करे । परन्तु मैं ऐसा निर्दयी और पुत्र घाती हो गया कि अपने आप ही अपनी संतान को व्याघ्र कंस के आगे रख आता हूं । महर्षि नारद ! मेरी शंका निवारण करो, मुझे बताओ. कंस से छोड़े हुए मेरे बच्चो का हाय ! आप ने क्यों वध कराया । महर्षि नारद आप तो ब्राह्मण हैं । आप ने यह क्या किया ?

देवकी —शान्त होवो नाथ ! शान्त होवो ! कही दुख के आवेश में महर्षि को कुवाक्य न कह जाना । स्वामी ! धीरज धरिये । महर्षि ने कोई लाभ सोच कर ही मेरे पुत्रों का वध कराया होगा । जरूर इस मे कोई रहस्य है ।

वसुदेव:—हा प्रिये ! अवश्य कोई रहस्य है । अच्छा जो हो अच्छा ही है । आज कहां गये मेरे कुसुम ?

हाय मेरे जग कुंज के, मुरझाये सब फूल ।
सुन्दर कोमल मार्ग मे, बिछ गये तीखे शूल ॥

( सिर पकड बैठ जाना )

[ महर्षि नारद का हाथ मे वीणा लिये गाते हुवे प्रवेश ]

गान

अत्याचार न्याय बन के
हरे है दुख सब ही जन के ।

वर्षावे है रवि अनल , जारे करे संहार ।
तप तपाय अति ताप सों , वर्षा करे वहार ॥
बहें लहरें शीत पवन सन के ॥ १ ॥

दम्भाधीन बने जब कोई , देता सब को त्रास ।
दुर्बल हाय निर्बल जनता की, कर देती है नाश ।
पड़े पाले तब बधन के ॥ २ ॥

अन्याय बढे ओर अति हो जावे, होता तभी सुधार ।
कर भ्रष्ट मति को अत्याचारी की, कर देता संहार ।
हैं अटल नियम जगनन्दन के ॥ ३ ॥

अत्याचार से अत्याचारी के ,कभी न रे मन डर ।
डूबत नौका निश्चय जानो, पाप से जा जब भर ।
रुके नहीं रोके अनेकन के ॥ ४ ॥

वसुदेव –भगवन् ! हम आततायी आप का क्या सत्कार करे ? ( चरणों में गिरता है )

नारद –आततायी ! आततायी ! वसुदेव ! तुम आततायी ! कभी ऐसा विचार न करना, संसार में तुम्हारा नाम अमर हो जायगा, जब तक मनुष्य जाति पृथ्वी पर रहेगी, संसार में तुम्हारा नाम भी रहेगा । दुख तो महात्माओं पर ही आया करते है ,वसुदेव ! ( देवकी से ) पुत्री ! इस गर्भ की रक्षा भली भांति करना । इस वार तुम्हारे चन्द्र लोक की एक महान् आत्मा जन्म लेगी जो कंस को ही नहीं परन्तु अनेक कंस जैसे अत्याचारियों को नष्ट भ्रष्ट कर देगी । माहात्मा ने तुम्हारी कोख में प्रवेश किया है,इसलिये इस गर्भ की विशेष रक्षा करना ।

देवकी—भगवन् ! आप की आज्ञा शिरोधार्य है। परन्तु दासी की शंका दूर कीजिये। कंस ने मेरे पहले पुत्र को वापिस कर दिया परन्तु आपने फिर उस का वध कराया। ऋषि श्रेष्ठ! मै अति ही मूर्ख हूं, तिस पर इस दुख और संताप से पागल हो गई हूं, मुझे धैर्य दो भगवन् ! मुझे सान्त्वना दो।

नारदः—पुत्री ! यह समस्या बड़ी जटिल है। देवकी ! यदि आज तेरे छः पुत्र जीवित होते तो इस पुत्र की जो तेरे गर्भ में है रक्षा कठिन थी। दूसरे अबोध बालकों के ही वध से अब अत्याचारी कंस के सब विरोधी हो गये हैं। अब इस राज्य का अन्त ही समझो। तेरे पुत्रों की तो मृत्यु होनी ही थी परन्तु कंस के हाथ से मर कर उन्हों ने अत्याचार की मात्रा बढादी ! कंस की मृत्यु के साथ साथ इस राज्य की भी अत्येष्टि हो जायगी।

वसुदेवः—धन्य भगवन् आप की नीति ! हमारा उद्धार होगा अन्यायियों का संहार होगा।

नारद—अब प्रसन्न हृदय से इस गर्भ की रक्षा करो। यह बालक छिपा कर गोकुल के जंगलों में ग्वाल गोपों से पाला जायगा।

देवकी—हाय ! महाराज वसुदेव का पुत्र! मुझ अभागिन का लाल, राजकुमार जगंल व जगंलियों मे पल कर अशिक्षित रहेगा !

नारद—देवी! शिक्षा ? जहां पर स्वजाति पर सभ्यता पर कुठार चला हो, धर्म का ह्रास हो रहा रहा हो, प्रजा त्राहि २ कर रही हो, वहां शिक्षा का विचार ! शिक्षा कभी ऐसी अशान्ति अन्धकार में प्राप्त हो सकती है ? देवी ! हम ने स्वयमेव शान्त वन को छोड़ कर-एकान्त वास, समाधि

आसन को छोड कर, इस अत्याचारी राज्य को मिटाने का प्रण किया है। मैंने सहस्रो वार कंस को समझाया परन्तु परिणाम कुछ न हुवा। इसी से मैंने कंस को अधिक अन्याय का परामर्श दिया।

न छोडे दुर्गुणो को दुष्ट यदि उपदेश से।
दुष्ट गुण उस के बढाकर नष्ट करने चाहिये॥

देवी! जब तक इस अत्याचार का अन्त न हो जाय तब तक निश्चित और अनिश्चित साधारण और असाधारण सभी कामों को बन्द कर देना चाहिये। परन्तु फिर भी तुम्हारा होनहार वालक अशिक्षित न रहेगा। जिन ग्वालों में वह पाला जायगा वह समाज बिल्कुल जंगली ही नहीं किन्तु सभ्य और सुशिक्षित भी है। तिस पर भी मै स्वयमेव उसे विद्या पढाऊंगा।

देवकी:—धन्य भगवन! यदि अब हमारी खाल भी उतारी जाय। मांस भी काटा जाय तो हम अब भी यही विचारे गे "हमारा भविष्य अच्छा है और कंस का बुरा"

वसुदेव:—भला जिस कार्य में ब्राह्मण का हाथ हो तिस पर भी आप जैसे महर्षि को—उस में सफलता प्राप्त न हो? भगवन! आप के दर्शनों से ही हमारा सब पुत्र शोक जाता रहा।

नारद—जो शेष है वह अब जाने वाला है और कंस का काल निकट आने वाला है (प्रस्थान)

देवकी—भगवन! अब वेग सुध लो।

वसुदेव:—चलो प्रिये! भीतर चलो।

(दोनों का प्रस्थान)

## तीसरा दृश्य— ( गर्भांक )

समय–दोपहर--( स्थान ) कंस का राजदर्बार

( मुष्टिक, चाणूर मदाक, विमल आदि अपने स्थान पर बैठे हैं )

मुष्टिक:–जहां तक विचार होता है चाणूर ! यह देश हमारे मगध देश से अधिक सुन्दर है।

चाणूर:–विशेष कर यह मथुरा नगरी ! हमारे देश में तो पहाड़ अधिक है, जल वायु भी इतना अच्छा नहीं।

मुष्टिक:–परन्तु अब तो मथुरा के ही धन से माला माल होने लग गया है

चाणूर:—हां, हमें इस देश वासियों का कृतज्ञ होना चाहिये, परन्तु हम तो दिन दिन उन्हे कष्ट दे देकर भ्रष्ट तथा धर्म से गिरा रहे हैं।

मुष्टिक:–इसी नीति से हम मगध देश को धनवान बना रहे हैं।

विमल:–( स्वागत ) क्या कहा ! मथुरा प्रान्त को कष्ट दे कर मगध को धनवान बना रहे हैं। धिक्कार है ऐसे राज्य को जो प्रजा को कष्ट देकर उस के रक्त से पाला जावे ! ( प्रगट ) सेनापति मुष्टिक ! मेरा बड़ा गूढ प्रश्न है। बतलाइये अपने हृदय पर हाथ रख कर बताइये-कि "प्रजा के प्रति राजा का क्या कर्त्तव्य है ? आप प्रजा का पालन करने के लिये हैं। क्या प्रजा का पालन कर रहे हैं ! आप प्रजा के रक्षक हैं वा भक्षक"?

मन्दा जा के शासक ! समझो विमल पाल !

विमल:–क्या मेरे सब प्रश्नों का केवल यही एक शुष्क उत्तर है ?

मन्दाक:—केवल एक ! "—शासक है" !

विमल — शासक ! प्रजा के रक्त से सने हुये भोगों को भोगने वाले शासक ! बेचारे गरीब किसानों के कमाये हुये धन, गरीब प्रजा की सम्पत्ति को अपनी विषय वासनाओं में लगाने वाले शासक ! जिस प्रजा के तुम पिता हो उस प्रजा के रक्त मांस को भक्षण करने वाले शासकों ! क्या तुम इसी लिये शासक हो ? उस परमेश्वर से डरो, अपने कर्तव्य को विचारो । और सम्भल कर आगे बढ़ो ।

( कंस का प्रवेश )

कंस —सम्भल कर ! विमल ! सम्भल कर चलना निर्बलों का काम हैं, डर निर्बलों के लिए है । कर्त्तव्य की सीमा निर्बल माना करते हैं । मैं देश का शासन अपने बाहु बल पर ( तलवार निकाल कर ) और इस तलवार के बल पर कर रहा हूं, बकवादियों की, आलसियों की तुच्छ सलाहों पर नहीं ।

विमल:—तब तो मुझे आप को प्रजा का पिता न कहना चहिये !

मन्दाक:—प्रजा का पिता बनता कौन है ? हम प्रजा के शासक हैं।

विमल:—तब आप दानवी शासक है, मानवी शासक नहीं।

मुष्टिक:—विमल ! सावधान ! तुम को कुछ होश है कि तू किस से बातें कर रहा है

विमल:—जानता हूं मुष्टिक महात्मा ! आप के प्रभु के साथ, अपने प्रभु के साथ नहीं ।

चाणुर:—यह याद रक्खो ! तुम महाराज के सन्मुख बालक हो !

विमल --खूब जानता हूँ कि मैं बालक हू । और खूब जानता हूं कि आप दानवी शासक है। अरे स्वार्थियो ! जो निर्बलों को मारकर उन के भोगों को छीनकर, बलात्कार जंगल के सिंह की तरह सब का स्वामी बन जाता है वह दानवी शासक है ! परन्तु जो धर्मात्मा, परोपकारी, निष्पक्ष-पाती, दयालु बलवान पुरुष प्रजा से अपना प्रतिनिधि चुना जाता है वह मानवी शासक है। बतावो तुम्हें किस ने चुना-था हत्यारों की तरह

कंसः--चुप ! चुप ! ओमूढ़ चुप होजा वरना यह तलवार तेरी मौत होगी।

विमल --राजन ! "आत्मा न जायते म्रियते वा"। आत्मा, न पैदा होता हैं न मरता है तू इसे क्या मारेगा।

चाणूर --इतना साहस !

विमल.--हां। धर्मात्मा निर्बल को भी इतना साहस होता है परन्तु पापी बलवान योद्धा का हृदय ही कांपा करता है। राजन ! अब भी समय है, अब भी सावधान हो जावो, प्रजा से अपने किये की क्षमा मांग लो। वरना यह मुकट और यह सिर अछूत बालकों से ठुकराया जायगा। अभी

कंसः--चुप ! चुप ! विमल चुप होजा । कंस पिता, पुत्र, भ्राता, बहन किसी की परवा नहीं करता। ( मुष्टिक से ) मुष्टिक ! इस ढीठ को प्राण दण्ड दो !

( मुष्टिक मारता है विमल गिरता है )

विमल --हा ! दैव ! दैव !! अत्याचार से मेरी इस मौत को ऐ संसार के लोगों ! याद रखना।

( मृत्यु )

नेपथ्यमें —याद रहेगी ! याद रहेगी ! ससार को तेरी मृत्यु ऐ विमल ! याद रहेगी-अत्याचारी कस ! अत्याचार की अन्त्येष्टि का समय आन पहुचा । सावधान ! अत्याचारी सावधान ! तेरे पाप का पात्र भरपूर हो गया-तेरे मारने वाला पैदा हो गया ।

कसः-( व्याकुलता म ) मुष्टिक ! चलो शीघ्र चलो । वालक सहित वसुदेव देवकी का वध करो । ( दोनो का प्रस्थान )

( दूसरी ओर म नारद का प्रवेश )

नारद –( मव म ) कार्यक्रम ठीक ठीक हो रहा है,अन्याय की सहायता करके अपनी अन्त्येष्टि न कर डालना ।

( मव वाक् शून्य खडे रह जाते है )

## दृश्य —चौथा

### स्थान —जंगल – समयः—संध्याकाल

(नारद का चेला मदन किसानों की निकाली हुई ताडी पीकर मस्त हुवा ताडी को हाथ मे लेकर नाचता व गाता है )

गान

जग चर्खा सा चलता है ।
तभी मर मेरा हिलता है ॥

सूरज, चाद सभी ये तारे , फिरे आकाश मे मारे मारे ।
ये हिले , सभी ये चले , मदन नहा टले ,
जग नहीं हिले, देख लो रग, मदन के सग,
बजे वजरग , रहे मे नग—बदन जलता है ॥१॥

घी मे कटोरी घी नहीं गिरता देखो तमाशा भाई ।
"घृताधारे पात्रम् सिद्ध" है पढ् शास्त्रों के माही ॥ २ ॥
सूर्य को परिक्रमा भूमि की, भूमि फिरे चहु ओर मेरे।
फिर पग में बाधी पृथ्वी मदन ने, मदन बड़ा या भूमि ॥३॥
सब से बुरा ब्याह करना है ; उस से बुरी संतान ।
ब्याह हुये ह भण्ड , मूर्ख निर्लण्ड, नीम के दण्ड ,
पहाडी खण्ड , भग के हण्ड, तभी रखता है ॥४॥

मदनः—तब भला मैं क्या बक गया ! ओह भूल गया । ( सिर खुजला कर ) अरे आग लग गई, भेजे में आग लग गई ! यह दूध किस ने बनाया ? बडे पुन्य का काम कमाया–जो मदन ने आनन्द मनाया । ताड के पेड़ में ये हंडिया बंधी देखी और उस में ये दूध देखा। प्यास के मारे बेचैन था–बस पी ही तो गया ( पुन पीता है ) जब से यह ताड़ का दूध पिया है तब से महात्मा मदन के नेत्रों ने रंग स्वेत किया है ।

नेपथ्य में:—अरे कौन हंडिया ले गया ?

मदनः—( घबरा कर ) उसे मदन पी गया । जरूर इन्हीं का माल था ( दो सिपाहियों का प्रवेश )

पहला:—ताड़ी की हडियां कौन ले गया ? यहां जगल मे तो कोई आने वाला भी नहीं ।

मदनः--तुम्हारा चाचा मदन भूल जाने वाला भी नहीं ।

दूसरा.--ताड़ी अब के बहुत ही गाढी थी ।

मदनः-अरे ये तो ताडी ढूढते है । क्या मारवाड़ी है जो ताड़ी ढूंढते है ? मै यों ही घबरा रहा था, थर थरा रहा था। वाह रे मैं ! ( पास जाकर ) ओ क्यों दर्शाते हो ? अरे यहां मेरे

पास क्यों नहीं आये ? लो अगर ताड का दूध पीना हो नो पी लो, यहां गाय का दूध नही मिलता। ( आप पीकर घडा फेंकना ) ॥

किसानः–( हट कर ) अरे रे ! सड़ गये ! अरे रे।

मदन.–धुत्त रे की ! अरे तुम्हारा सत्यानाश जाये दूध में भी कोई सडता है।

पहलाः–अरे ये दूध नही ताडी है।

मदन–इसी ने हमारी ज़वान बिगाडी है। थू !

( थूकना, किसान हटते हैं )

किसानः–( चपत मार कर ) अरे हमारी पी गया ताड़ी। ऊपर से थूकता है।

मदन –तुम ने हमारी जिह्वा बिगाडी। ऊपर से मदन मोदक खिलाऊ ? अरे मुझे वमन होती है।

किसानः–मारो बेईमान को मारो। ( जूते से मारना )

मदन –( चिल्ला कर ) हाय गुरु जी ! हाय पिट गया ! गुरू जी बचाओ ! चेले को बचालो ! महात्मा मदन को– शिष्य विन जीवन फीका जी, गुरु शिष्य विन हाय गुरु जी ! ( रोता है )

( नारद का प्रवेश )

नारदः–अरे क्या है मदन ?

मदन–हाय गुरु जी ! मैं दूध जान कर यह सब पी गया, ये कहते हैं तूने हमारी ताडी पीली। ( रोकर ) इन्हों ने मुझे मार डाला और धर्म भी भ्रष्ट कर डाला।

नारद -हरे ! मदन ! तूने वुरा किया जो नशा पिया !

मदन –नशा ? नशा ? महाराज ! तव तो गाय का दूध भी नही पीना चाहिये।

नारदः–मूर्ख ! गाय का दूध नशा नहीं करता।

मदन –गाय के मांस का वना दूध तो नशा नहीं करता और पेड़ का दूध नशा करता है। यह तो कुछ समझ में नहीं आई। ( नारद से ) गुरू जी ! उस दिन व्यास जी ने भी तो पी थी।

नारद –अरे मूर्ख ! भला कहीं महर्षि व्यास भी ताड़ी पी सकते हैं। वह तो ठण्डाई थी।

मदन –भंग ? महाराज ! भंग ना ? हां भंग तो अच्छी चीज हैं।

नारद –पुत्र ! भंग भंगी पीते है। ब्राह्मण नहीं पीते।

मदनः–भंग भंगी पीते है ! ठीक ! ठीक ! भंग के नशे में ही नगर का मल मूत्र ढोते है।

नारदः–मदन तुम आठ दिन का उपवास करो। फिर कभी ऐसा न करना – समझे मदन ?

मदनः–भूखा ! भूखा ! हाय ! भूखा कैसे रहूंगा। गुरु जी ?

नारदः–नहीं तुम्हे कोई कष्ट न होगा। ( किसानों से ) क्या तुम ताड़ी पिया करते हो ?

पहलाः–नही नही महाराज ! हम काहे पियेंगे। वैद्य जी के यहां वना करत है। उनके वास्ते लेय जावत है।

नारदः–ये मेरा शिष्य वड़ा ही मूर्ख है। इसके अपराध को क्षमा करो, इसने ग़लती की। ( प्रस्थान )

मदन -गलती की है-हा-ह-हाय ! मैने क्या पी लिया । एक नई विद्या तो सीखी । ये वैद्य जी के रहते हैं ज़रूर सब दवा जानते हैं । ( किनानो म ) भाई तुम कोई ऐसी दवा तो बनाओ कि मैं इस नारद मुनि को जान से मारदूं यानि गुड्डुप करदू ।

पहल, -शिव ! शिव !! शिव !!! तू तो इसका चेला है ।

मदन -सुनो भाई मेरा नाक,में दम आ गया है । पहले मैं एक शिकारी था और जैसा अब हू ऐसा ही भिखारी । एक दिन प्रातःकाल दुर्दैव का मारा, मैं हत्यारा, एक मृग के पीछे सिधारा और वहां यह नारद आ पधारा । वहां इसने ऐसी सैन चलाई कि मेरी मेधा बुद्धि भी चकराई । छोड़कर धनुष बाण, लेकर अपने प्राण इनके पीछे भागा । मांस खाना भी छूट गया और झूठ का बोलना भी छुट गया । मैं बिल्कुल लुट-गया । मेरा-सारा छल, कपट का व्यवसाय छुट गया और मिला क्या ? शान्ति और दया । इस बिप्पर ने मुझे बिल्कुल ही चौपट्ट कर दिया । हाय रे हा ! मेरा पुराने घुने टूटे बासों की छत वाला बालू का महल रड रड रड करके गिर गया । ( रड शब्द से चौकता है ) ऐं क्या कोई वृक्ष गिरा ?

दूसरा-नहीं आपका बालू का महल गिर गया ।

मदनः-क्या वास्तव में गिर गया ? आपसे किसने कहा ?

दूसराः-आपने ही तो ।

मदनः-मैंने ?

पहलाः-हां तूने ।

मदन-क्या कहा ?

दूसरा-महल गिर गया

मदनः–आप से किस ने कहा।

पहला:–तू ने।

मदनः–मैंने ? क्या कहा ?

दूसरा:–ये मूर्ख है। ( प्रगट ) जो हम ने सुना !

मदनः–तुम ने क्या सुना ?

पहला:—जो तूने कहा।

मदनः–अरे भाई ये हो तो हम भी पूछते हैं कि हम ने क्या कहा ?

दूसरा:–जो हम ने सुना।

मदनः–क्या सुना ?

पहला:–जो तूने कहा।

मदनः–तो 'यही कि मेरा महल गिर गया भैया,' लडते क्यों हो ! अब तो सब कुछ गया सब चौपट कर दिया। हाय गुरु जी ! बड़ा झुंझलाता हूं। फिर भी बंदरिये के बच्चे की तरह तुम्हारे पीछे ही फिरे जाता हूं। ( किसानो स ) क्यों भइया ! बतावोगे कोई ऐसी दवा ?

पहला:–अरे पापी ! जिसके दर्शन से हमारे नेत्र सफल हुए तू उस महात्मा को मारना चाहता है।

दूसरा:–अरे हीरे की कनी को ससार से मिटाना चाहता है। अगर मारना ही है तो कंस को मार जिस ने कुहराम मचा रक्खा है। पाप का किस्सा जमा रक्खा है।

मदनः–अरे कंस का नाश अब निकट ही जानो। कंस का अन्त आया निकट, उस का वंस जायगा निमट। परन्तु

आज हमें बड़ी शिक्षा मिली । मैं गुरु का शिष्य मुझे किसी का डर नहीं । कभी क्रोध आ जाता है इसी से जी अकुलाता है । नहीं तो नारद भगवान् का भक्त हूं ।

पहला:-आज महाशय क्या शिक्षा ली हमको भी तो सुनाओ ।

दूसरा:-हां सुनावो मदन जी ।

मदन.- सुनो

गान

भग पिये सो भगी , है बात मदन की चगी
तन तेज घटे , मन मैल बढे
तभी भग मिले है चगी ॥
ये भग के पीने वाले , बने मल से मली मैलाने ।
भंग चढे; जब गग , बढे होय बुद्धि बेढगी ।
पिये जब भग , बने बजरग , होय कर अन्ध ,
नीच मतिमद , खाय बेढग ;
घडी भर की पूरी जगी ॥

( प्रस्थान )

## दृश्य पांचवा—( गर्भांक )

स्थानः—कारागृह समय—अर्धरात्रि

( देवकी वस्त्र ओढे पृथवी पर लेटी हुई है। पीछे धात्रि सेवा कर रही है प्रसव- समय के अन्यक्ष वस्तुवे अत्र तत्र रक्खी हुई है। )

देवकीः—

गान

हा नयनन तारे, प्राण हमारे, बालक मोरे कहा गये ?
अभी ले चलो साथ मुझ को भी, प्राण अधार जहा गये ॥
बिन सतान, जगत मे हा हा, जीवन चाहे कौन भला।
जो चाहे, अपनाले इस को, मै राखू नही जीवन यहा ॥
परजा पर सताप अति, अब कहा तक आशा बधे हिये ।
निन्दित राज्य मे पडे रहे, जो जाने, जीवन बडा यहा ॥
स्वतत्र रहे, जब तक जीवन हो, ये ही बस अभिलाष रहे।
आधीन हुवे तो जिये ही क्या, इस से तो मर मिटे यहा ॥

हां ! विधाता ! अब तो सब कुछ देकर भी छीन लिया। क्यों अब हम कष्ट पा रहे है ? यदि छीनना ही था। तो यह सब कुछ क्यों दिया ! क्यों मुझे मां बना कर निपूती कर दिया हाय मेरे चन्द्रमा से खिलौने क्या हुवे ? मेरी जीती जागती मूर्तियें कहां गई ? भूखे व्याघ्र ! मेरे बालकों को खाने वाले अत्याचारी कंस ! क्या तेरा पत्थर का हृदय इतना कठोर हो गया जो मेरे बालकों के रक्त से भी नहीं पसीजता।

धात्री –महारानी ! तुम बहुत निर्बल हो। यह समय शोक का नहीं।

नेपथ्यमें:–द्वारपालों ! महाराज आने वाले है।

देवकी –कौन आने वाला है ? नर पिशाच–हत्यारा कंस !! अरे कुल कलंक कंस ! आ–तू आ–आज देखूंगी, तेरा कैसा तेज है–तेरा कैसा दर्प है। अन्यायी ! तेरे अत्याचार से वसुन्धरा पीडित हो रही है। मैं देखूंगी तू किस शक्ति पर कूद रहा है। आज तेरा बल, तेज देखूंगी कंस !–नहीं २ कभी नही कदापि नहीं, तुम जैसे नर पिशाच का मुंह देखना पाप है, घोर पाप है। ऐसा न करूगी, कभी न करूंगी, कंस तेरी शक्ल न देखूंगी। न देखूंगी कंस ! कभी न देखूंगी।

( उठकर प्रस्थान )

धात्री –महारानी। इस दशा मे कहां जाती हो ठहरो ठहरो !

( प्रस्थान )

{ दूसरी ओर से बटोही के वेश मे वसुदेव का कमर से टोकरी बाधे तथा कन्या को लिये प्रवेश }

वसुदेव –( कन्या को देख कर ) कैसी सुन्दर कन्या है ! यह स्वरूप और दुष्ट कंस ! तेरी तलवार ! ( मुख चूम कर ) अहा ! प्राण पुत्री ! भूल गया–वचनों को, भूल गया–प्रतिज्ञा को, भूल गया। मैं तेरे जीवन की रक्षा करूगा। मैं तुझे बचाऊंगा कंस के हाथों से बचाऊंगा। तू भिक्षुक नेत्रों से देख रही है। तेरी आंखें विनय कर रही हैं, कह रही हैं, मुझे बचावो। हां तुझे बचाऊंगा। तेरे जीवन की रक्षा करूंगा। कंस से मिथ्या

वचन कहूंगा "कोई बालक नही जन्मा बेटी ! मैं तेरे लिये झूठ बोलूंगा ।

नेथ्यपर्मे:-भूल गये ।

( नारद का प्रवेश )

नारद:-भूल गये । वसुदेव ! भूल गये । अपनी प्रतिज्ञा को भूल गये । अपने वचनों को भूल गये वसुदेव !

वसुदेव:-नहीं, भूला नहीं, ब्रह्मर्षि ! अपने वचनों को भूला नही परन्तु मोह वश प्रेम वश इस बालिका के चन्द्र मुख को देख कर कौन मोहित न होगा ? कौन इस के जीवन की शुभ कांमना न करेगा ?

नारद:-करेगा । प्रत्येक पुरुष करेगा, परन्तु तुम तो प्रतिज्ञा पाश में बंध चुके हो । अपनी संतान को कंस के अर्पण का वचन दे चुके हो वसुदेव ! कंस शीघ्र ही इस कन्या का वध करने के लिये आने वाला है । शीघ्र ही देवकी को बुलावो उसे; प्रसूता के वस्त्रों में बिठावो । वसुदेव ! जिस महान् आत्मा ने इस राक्षस का नाश करना है वह सुरक्षित गोकुल पहुंच चुकी । फिर क्यों चिंता करते हो ! वसुदेव ?

वसुदेव:-कंस आने वाला है । उसे कैसे पता लगा महर्षि ?

नारद:-समय नहीं है, इन सब बातों को बताने का समय नहीं है जिस कार्य को करना है उसे शीघ्र करो

वसुदेव:-( कन्या को देख कर ) अहा ! नहीं मैं प्रतिज्ञा को तोड दूंगा । तेरी रक्षा करूंगा बालिका ! तेरी रक्षा करूंगा । नहीं ! नहीं प्रतिज्ञा भी नहीं टूटेगी !

नारद –सो कैसे ? वसुदेव ! क्या अपनी स्मृति खो बैठे ? क्या बुद्धि भ्रष्ट हो गई ?

वसुदेव–शायद हो गई ! हा भगवन् ! अपनी ही सतान को देने की प्रतिज्ञा की थी, न कि दूसरे की भी। यशोदा की कन्या का कैसे वध होने दूं ?

( कन्या हाथ पैर हिलाती है वसुदेव कन्या को हृदय मे लगाते हैं )

इस बालिका को बचाओ। मेरी सब सतानों से यह अधिक सुन्दर अधिक सौभाग्यवती है इसे बचावो महर्षि ! ईश्वर के लिये इसे बचावो !

( कन्या को ऋषि के चरणों में रख देता है )

नारद –वसुदेव ! भूलते हो, पहचान करो ध्यान से देखो। यह कन्या नहीं है। यह बालिका नहीं है वसुदेव !

वसुदेव:–( हैरानी से ) बालिका नहीं है ? कन्या नहीं है ? तब क्या है। नहीं नहीं यह तो जीती जागती मूर्ति है।

नारद –यह जड़ है यह चेतन नहीं है वसुदेव ! मायावी कन्या यह पचतत्व की कन्या, विद्युत् की शक्ति से आकाश में रहने वाली, बिजली की शक्ति से हिल रही है। आंखे फिरा रही है और सजीव दिखलाई दे रही है, इस में जीव नहीं है वसुदेव ?

वसुदेव -अहा ! हा ! क्या यह जड है ? क्या यह वैज्ञानिक बालिका है ! क्या यह मायावी कन्या है ? यशोदा की गोद तक इसे कैसे पहुचाया भगवन् ! इसे कैसे बनाया ?

नारद - वैज्ञानिक रीति से व्यास ने बनाया और मूर्छा के योग से मैंने यशोदा की गोद तक पहुचाया था वसुदेव !

विस्तार से बताने का समय नही है। जावो जिस कार्य को करना है उसे करो।

(वसुदेव का कन्या को उठाना, कन्या का हंसना)

वसुदेव:-विश्वास नहीं होता - विश्वास नहीं होता महर्षि ! कि यह कन्या मायावी है। यह मनुष्यवत् हंसती है।

नारद -यह मायावी कन्या इस से भी आश्चर्य जनक काय करेगी। विद्युत की शक्ति से - तत्वों के योग से इस प्रतिमा में शब्द समूह भरा गया है। यह शब्दोच्चारण करेगी कंसके भविष्य को बतायेगी। जावो, शीघ्र जावो। निर्धारित कार्य को करो। यह सब भेद देवकी को न बताना वसुदेव !

(प्रस्थान)

वसुदेव:- धन्य महर्षि! धन्य! आपका अत्योत्तम उपाय धन्य !

(देवकी का प्रवेश)

देवकी:—(क्षीण स्वर से) आ गये प्राणनाथ! आ गये कहो प्यारे लाल का कुशल समाचार कहो नाथ !

वसुदेव:—यशोदा माया की मूर्छा में निमग्न थी।

देवकी —मूर्छा में ?

वसुदेव —(स्वगत) ओह भूला ! (प्रगट) नहीं २ नीद में बे खबर थी। तभी तेरे लाल को उस की गोद में लिटा इस कुसम रूपी कन्या को ले आया हूं।

(कन्या को देते हैं)

देवकी:—अहा चन्द्रकला! पर क्या नाथ! यह भी कंस का आखेट बनेगी ? क्या पराई पुत्री का कलंक भी हमारे माथे लगेगा ? नहीं नहीं मैं इसे बचाऊंगी।

( प्रसूता के वस्त्रों में बैठती है )

**नैपथ्य में:-छीन लो, बालक को छीन लो।**

( द्वारपालों व मुष्टिक सहित कंस का प्रवेश )

कंस -देवकी! लावो, बालक को लावो! और अपने पति को, प्रतिज्ञा ऋण से उऋण करावो।

देवकी -कंस! भाई! देख-आंख उठा कर देख! मुझ अभागिन की ओर देख! बता कंस बता! मैं तेरी कौन हू-?

कंस -देवकी! जाने दो, उन बातों को जाने दो। माना तुम मेरी बहन हो, परन्तु तुम्हारी संतति ही मेरी मृत्यु का कारण है। तुम्हारा मेरा क्या नाता-तुम्हारा मेरा क्या सम्बन्ध। मेरे प्राणों की प्यासी—तेरी संतान! बता देवकी! बता-तेरा मेरा क्या नाता?

देवकी -तेरा पाप-तेरा अत्याचार-तेरे कर्मों का दुश्चरित्र ही, मेरे प्राणों का पिपासु है। कंस! मेरी संतान का वध करने से तेरी रक्षा नहीं हो सकती। कंस! भाई कंस! क्यों तुम बाल काल की संगनि - मुझ दुखिया - बहन के साथ इतना अत्याचार कर रहे हो? हाय! भैया! तुम्हीं बाल काल मे मेरा मुख चुम्बनों से भर देते थे। तुम वही हो ना? आज तुम मेरे आत्मजों के रक्तपान करने को सदा बेचैन रहते हो मैं तुम्हारे पैर पड़ती हू भैया! मे तुम्हारे महलों की दासी हो कर रहूगी! तुम्हारे जूठे टुकड़ों को खाकर दिन बिताऊंगी। परन्तु भैया! मेरे जीवन की भावी आशा के लिये इस कन्या को मत मारो मै तुम्हारे चरण पकड़ती हूं कंस! मेरे सब पुत्र मृत्यु पथ पर जा चुके, अब तुझे किस की चिंता है? कंस!

कंसः—नहीं देवकी ! नहीं ! पुत्र हो या पुत्री—तेरी संतति का जीवित रहना, मेरी और मेरे राज्य की हस्ती के लिये अशुभ ही होगा । मुष्टिक ! लावो तलवार ! क्यों विलम्ब किया जाय ( मुष्टिक तलवार देता है )

देवकी —( कंस का हाथ पकड़ कर ) मुझ अभागिन पर दया कर भाई ! बहन पर अत्याचार न कर । मेरे प्राणों को बाहर न निकाल कंस ! छोड़ दे ! हाय छोड़ दे ! दुष्ट ! मेरी पुत्री को छोड़ दे पापी !

( बच्चा देकर छीनने का उद्योग करती है )

कंसः-- नहीं ! पीछे हटो देवकी ! तुम्हारा यत्न वृथा है है, जीवित कन्या तुम्हें न मिलेगी

( देवकी छीनती है )

कंसः-वृथा है देवकी वृथा है ! लो यह कन्या-

कन्या को पृथ्वी पर पटक देता है, विज्ञान से बनी कन्या

जिवित रूप होकर आकाश मे जाती है

आकाश मेंः—सावधान कंस ! सावधान ! देवकी से उत्पन्न हुवा बालक गोकुल पहुंच चुका , तेरे मारने वाला गोकुल पहुंच चुका-कंस !

कंसः-ओह ये क्या ! कपट -सरासर कपट है ।

( मुष्टिक, वसुदेव देवकी को सदा के लिये बंदी बनाओ )

मुष्टिक, द्वारपालों की सहायता से देवकी व वसुदेव को बेड़ियों मे बांधते है

———

# दृष्य छटा

स्थान -- वेणुनाथ का घर समयः-- सायंकाल

वेणुनाथ का प्रवेश, पीछे २ हाथ मे पत्र लिये उन के पुत्र अक्षय का प्रवेश

वेणुः—अक्षय ! क्या निश्चय ही मुष्टिक ने विमल का बध किया ?

अक्षय—हां पिता जी ! कुमार विमल पाल ने कंस को बहुत कुछ समझाया पर उस ने एक न मानी !

वेणु—वह मानता भी क्यों ? शक्ति मद से अन्धा।

अक्षयः—तब विमल ने अत्यन्त कठोर शब्दों से कंस को सावधान किया, परन्तु प्रभाव उल्टा ही हुआ। क्रोधान्तर कंस की आज्ञा से मुष्टिक ने निर्दोष, निशस्त्र विमल को मार डाला।

वेणुनाथ—( क्रोध मे ) और तुम देखते रहे?

अक्षय—नहीं पिता जी मैं उस समय राज दर्बार में न था।

वेणु—राजकुमार ! तुम ने अत्याचार के विरुद्ध प्राण दिये हैं। तुम्हारा यश चन्द्र लोक तक व्याप्त होगा ( अक्षय से ) बेटा ! महात्मा वसुदेव को जब विमल की मृत्यु का समाचार मिला तब उन्हों ने मेरी बात का क्या उत्तर दिया ?

अक्षयः—महाराज ने कुमार की मृत्यु को सुन कर बहुत विलाप किया और मुझ से " अक्षय ! कहा जावो, शान्त होकर आवो। मेरे भक्त, वृद्ध अपने पिता से कहना कि तुम वीर हो, बुद्धिमान हो, अब तुम कंस के राज्य में हो वसुदेव के राज्य में नहीं। शान्त हो जावो किसी प्रकार का उत्पात न होने पावे यही तुम्हारे बंदी राजा की इच्छा है "।

वेणुः–अहा ! मेरे बंदी राजा ! मैं शान्त होकर अत्याचारी राजा के चरणों पर इस पवित्र मस्तक को रख दूं, और मेरी अराधना मूर्ति वसुदेव ! तू जेलखाने में पडा रहे !

अक्षयः–पिता-जी उन्हों ने कहा था कि यदि तुम्हारे पिता का क्रोध शान्त न हो तो उन्हें मेरे पास भेजना।

वेणुः–सो किस लिये ?

अक्षयः–समझाने के लिये।

वेणुः–शान्ति के रहस्य को समझाने के लिये ?

अक्षयः–जी हां !

वेणुः–लेकिन अक्षय ! मैंने तो कभी शान्ति शब्द ही नहीं पढा जब से सेना का सेनापति हुआ हूं तब से मैं तो धन्वा की टंकोर, तलवारों की झनकार, घोड़ों का हिन हिनाना, घायलो का छट पटाना ही जानता हूं। नीबू के साथ तो मैंने कभी दूध को शान्त नहीं देखा। हाय ! हाय ! हम शान्त होकर अपवित्र चरणों पर मस्तक रख दें। दानव शक्ति के मद से पागल कंस के आधीन हो जावें।

वेणुः–पिता जी कंस का सामना करना हम सब के लिये असम्भव है, अतः रक्त पात क्यों किया जाय !

वेणुः–अहा ! डर गये। अक्षय ! क्या निर्बल होकर अत्याचार के सन्मुख सिर झुकाना चाहते हो ? अक्षय क्या हम आर्य होकर कुलागार कुलकलंक कंस के चरणों पर मस्तक रख दें ? क्या हम उस की दाहनी भुजा बन कर, उस के हाथ की तलवार होकर निरापराध निर्दोष बच्चों का सिर काटने लग जायें। क्या हम कुलवती स्त्रियों को भ्रष्ट

करने लगे ? बेटा ! बताओ, अन्याय की आज्ञा से प्रजा मे हाहाकार मचाना, निर्दोष बालकों को मृत्यु की भेंट चढाना, कौन पुन्य है ? कौनसा माहात्म्य है अक्षय ? ( स्वगत ) धन्य तू है विमल ! जिसने मर्यादा की रक्षा के लिये प्राण दिये। आज तेरा शरीर, मर्यादा तथा देशपक्ष पर तुझ से छूट गया, धिक्कार है मेरे इस वृद्ध मोटे शरीर को ! मेरा शरीर-पर हित में कब काम आवेगा ? ( अक्षय से ) बेटा ! जावो, अभी जावो, उस मूर्ति को, विमल के शव को यहां लिवा लावो, जिस ने धर्म के लिये , नि:सहाय निर्बलों के वास्ते अत्याचारी कस को सुमार्ग पर लाने का यत्न किया और अपने क्षणभंगुर प्राण भी दान कर दिये। मैं उस मूर्ति, उस प्रतिमा के दर्शन करके अत्याचार की अग्नि में अपने शरीर को फेंक दूगा। या तो इस अग्नि को बुझा दूगा या स्वय ही जल रहूंगा। बेटा जावो !

( अक्षय का प्रस्थान )

वेणु —( अपने तर्कश व धनुष को हाथ में लेकर ) प्यारे धन्वा ! आज तुम मलीन हो, तुम पर धूल चढ़ गई है। जब से महाराज जेल की यातना भोग रहे हैं तब से तुम उदास क्यों हो ? मै भी तुम्हें भूल गया हू-शायद इसी लिये दुखी हो प्यारे आज तक तुम युद्धों में दिखाई दिये, परन्तु अब ग्राम २ में व्याप्त हो जावो निर्बल निर्दोष प्रजा पर, जाति पर, देश पर और सभ्यता पर अत्याचार हो रहा है और तुम मलीन हो। तुम्हारा ही तो सहारा हम ने तका है। ( डोरी को टकार कर ) अहा हा ? तुम्हारा स्वर कितना कर्ण प्रिय है ! ( तरकश को लक्ष्य करके ) क्यों ? क्या बाहर निकलने को उतावले हो रहे हो। घबराओ नहीं। तुम्हें अन्यायियों के कठोर हृदयों से पत्थर निकालने होंगे। देखो किस चातुर्यता से काम करते हो-घाव

कुछ भी न सुनी। जिसे त्यागने से हृदय शून्य, देह अ
अस्थाई, वृथा हो जाती है, उसे आज आपने छीन लि
हाय कंस पाप का भयानक दण्ड मुझे दिया ? प्रभो !

वेणु —पुत्री ! शोक को छोड़ो ! देश के लिये प्राण
वाला तुम्हारा पति धन्य है।

सुजला —ठीक कहते हो सेनापति जी ! मेरे स्वामी
देश के लिये प्राण दिये है। मेरा भी कर्तव्य है कि
अधूरे काम को पूरा करूं। आज मैं संन्यासिनी
रानी से वनवासिनी होऊंगी। नाथ ! देख लो, आज
नयन रजनी तुम्हारे सजाये श्रृङ्गार को मिटा रही है (
उतार कर फेंकती है) विदा, विदा, ऐ संसार के भोगों ! विदा
से) लावो, मेरे लिये वल्कल के वस्त्र लावो, गजीके वस्त्र
आज मै इन वस्त्रो को उताकर गेरुवां कपड़े रगूंगी।

वेणु:- सुजला ! यह वेश हम से नहीं देखा
लिये हम इस अत्याचार का वदला लेंगे।

सुमन्त:—अभी सेनापति जी ! कर्तव्य पुकार
आप भी खड़े हो जाइये। वास्तव में, जीवन पथ
आज ही आई हूं।

( प्रस्थान, दूसरी ओर से सुमन्त का प्रवेश )

सुजला:—मां ! मां ! मेरी मां कहां गई ?

वेणु:—विमल तेरे आत्मज को देख कर भूला
याद आ गया !

अक्षय.—आवो सुमन्त ! मेरे पास आवो।

( गोद में उठाते हैं )

सुमन्त: -अच्छा मेरे पिता जी दर्बार से कब आयेंगे ?

अक्षय:-ठीक २ नहीं मालूम ! प्यारे सुमन्त ! आतेही होंगे।

सुमन्त:—पहले तो रोज़ आते थे ! अब कई दिन से नहीं आये, तुम झूंठ क्यों बोलते हो ?

वेणु.—हाय बेटा !

सुमन्त:—भला तुम रोते क्यों हो ? क्या वे बिना ही अपराध रूठ गये ? चलो दादा उन्हें बुला लावें, माँ हर समय रोती रहती है, उसे बड़ा दुख है।

अक्षय—कंस आने नहीं देगा।

सुमन्त —( क्रोध मे ) आने नहीं देगा ! मैं उस के सिर पर लात मारूंगा ( नन्हें २ पैर पृथ्वी पर पटकते हैं ) इस उंगली से उस की दोनों आखें फोड दूंगा-हां ! ( नेत्र गिराना ) मेरे पिता क्यों न आ-आ ( रोने लगता है )

अक्षय:—नहीं सुमन्त ! वे आप आ जांयगे।

सुमन्त —नहीं २ ! मै अभी कंस के मुंह पर लात मारूंगा।

( पुन रोता है )

वेणु:—मारेंगे बेटा मारें ( रोते हैं )

सुमन्त:—तुम भी रोते हो—दादा भी कभी रोया करते हैं। पिता जी क्यों उस के दर्बार में जाते हैं ?

अक्षय —यों ही सुमन्त !

सुमन्त —यों ही क्यों ! चाचा ! तुम मुझे बहकाते हो दादा ! तुम अब कस को मार दो उस के पेट में तीर मारो !

वेणु.—हां मारेंगे बेटा !

कुछ भी न सुनी। जिसे त्यागने से हृदय शून्य, देह आधी अस्थाई, वृथा हो जाती है, उसे आज आपने छीन लिया। हाय कंस पाप का भयानक दगड मुझे दिया? प्रभो!

वेणु.—पुत्री! शोक को छोड़ो! देश के लिये प्राण देने वाला तुम्हारा पति धन्य है।

सुजला.-ठीक कहते हो सेनापति जी! मेरे स्वामी ने तो देश के लिये प्राण दिये है। मेरा भी कर्तव्य है कि स्वामी के अधूरे काम को पूरा करूं। आज मै संन्यासिनी होऊंगी, राज रानी से वनवासिनी होऊंगी। नाथ! देख लो, आज तुम्हारी नयन रजनी तुम्हारे सजाये शृङ्गार को मिटा रही है (आभूषण उतार कर फेंकती है) विदा, विदा, ऐ संसार के भोगों! विदा। (अक्षय से) लावो, मेरे लिये वल्कल के वस्त्र लावो, गज़ीके वस्त्र लावो! आज मै इन वस्त्रों को उताकर गेरुवां कपड़े रगूंगी।

वेणु:- सुजला! यह वेश हम से नहीं देखा जाता। तेरे लिये हम इस अत्याचार का बदला लेंगे।

सुमन्त:—अभी सेनापति जी! कर्तव्य पुकार रहा है। आप भी खड़े हो जाइये। वास्तव में, जीवन पथ पर तो मैं, आज ही आई हूं।

( प्रस्थान, दूसरी ओर से सुमन्त का प्रवेश )

सुजला:—मां! मां! मेरी मां कहां गई?

वेणु:—विमल तेरे आत्मज को देख कर भूला हुवा दुख याद आ गया!

अक्षय:—आवो सुमन्त! मेरे पास आवो।

( गोद में उठाते हैं )

सुमन्त: -अच्छा मेरे पिता जी दर्बार से कब आयेंगे ?

अक्षय:-ठीक २ नहीं मालूम ! प्यारे सुमन्त ! आतेही होंगे।

सुमन्त:—पहले तो रोज आते थे ! अब कई दिन से नहीं आये, तुम झूठ क्यों बोलते हो ?

वेणु.—हाय बेटा !

सुमन्त:—भला तुम रोते क्यों हो ? क्या वे बिना ही अपराध रूठ गये ? चलो दादा उन्हें बुला लावें, माँ हर समय रोती रहती है, उसे बड़ा दुख है।

अक्षय —कंस आने नहीं देगा।

सुमन्त.—( क्रोध मे ) आने नहीं देगा ! मैं उस के सिर पर लात मारूंगा ( नन्हें २ पैर पृथ्वी पर पटकते हैं ) इस उंगली से उस की दोनों आखें फोड दूंगा-हाँ । ( नेत्र फिराना ) मेरे पिता को क्यों न आ-आ ( रोने लगता है )

अक्षय:—नहीं सुमन्त ! वे आप आ जांयगे।

सुमन्त —नहीं २ ! मै अभी कंस के मुंह पर लात मारूंगा।

( पुन रोता है )

वेणु:—मारेंगे बेटा मारें - ( रोते हैं )

सुमन्त:—तुम भी रोते हो—दादा भी कभी रोया करते हैं। पिता जी क्यों उस के दर्बार में जाते हैं ?

अक्षय —यों ही सुमन्त !

सुमन्त —यों ही क्यों ! चाचा ! तुम मुझे बहकाते हो दादा ! तुम अब कंस को मार दो उस के पेट में तीर मारो !

वेणु.—हां मारेंगे बेटा !

सुमन्त—हां मार दो। मुझे राजा बनावो। मैं सब को मिठाई खिलाया करूंगा।

( गेरुवे कपडे पहने वालों मे राख लगाये सुजला का प्रवेश)

सुजला—आवो ! मेरे लाल आवो ! लावारिसा अबला के तारे आवो ! मुझ विधवा के सहारे आवो ! (गोद में उठाती है) बेटा ! तुम्हारी मैया कर्तव्य पथ पर चढ चली है।

सुमन्त—पिता जी को बुलाने जा रहा हूं। मां तू नये २ कपडे पहन ले, नहीं तो पिता जी रूठ जांयगे।

सुजला:—हा बेटा ! हा नाथ !

सुमन्त:—तू रोती क्यों है मां ! यह तेरा कैसा वेश ?

सुजला:—( हट कर ) हट ! हट ! मेरे कर्तव्य पथ में शंका करने वाले हट ! मुझे मोह पाश में फसाने वाले बालक हट !

( प्रस्थान )

सुमन्त—दादा जी ! मेरी मां बावली हो गई; हाय ! मा पागल हो गई !

( सुजला का प्रवेश )

सुजला—बेटा ? आ—एक बार फ़िर मुंह चूम लू, फिर शायद न देख सकूं। ( चुम्बन )

( पुन हटती है )

सुजला:—नहीं, तू तो छलिया है। तू मेरा कौन है ? कोई भी नहीं। देख, अरे कंस ! सावधान ! सावधान !! आज मैं अबला, पति विहीना तेरे राज्य को मिटाने आई हूं। सावधान ! देख ! पीछे मत हटना। तेरे राज्य को, तेरे परिवार को, देख !

मेरी आह मिटा देगी। सावधान! संसार के सब अत्याचारियो! सावधान! (वेग से प्रस्थान)

सुमन्त—मां! मां! कहां चली? (पीछे २ भागता है)

वेणु:—ओह! राज बधु सुजला! अरे नीच कंस! (अक्षय से) बेटा! विमल के शव को यमुना किनारे ले चलो।

(प्रस्थान)

(शव को लेकर सब जाते हैं)

## सातवां दृश्य

स्थान—यमुना तट का जंगल। समय:—प्रात:काल

(एक वृक्ष के नीचे एक ग्वाल व उस की स्त्री पृथ्वी पर सो रहे हैं)

(कृष्ण का प्रवेश)

कृष्ण:—मैंने सचमुच भूल की। नारद जी ने कहा था कि तुम इन ग्वाल बालों में अपने आप को बिलकुल ग्रामीण जङ्गली सा दिखाना। परन्तु जब कभी मैं, इन बालकों को वेदान्त के सूत्र सुनाता हूं, सांख्य की बात बताता हूं, राजनीति की समस्या समझाता हूं, तो ये भौचक्के से रह जाते हैं। नहीं, अब ऐसी भूल न करूंगा। अब तो बिलकुल ही ग्रामीण बनूंगा (पुकार कर) भइया बलराम!

नैपथ्य में:—हां भइया ! आया।

कृष्णः—भइया ! यह मूंह वंद करके काहे बोलते हो ? क्या गुड़ के लडड खाय रहे ?

( वलराम का प्रवेश )

कृष्णः—भइया अव तो मैं ग्रामीण सा बोलता हू !

वलरामः—हां भइया !

( ग्वाल वालकों का प्रवेश )

सवः—किसना भइया !

कृष्णः—हां भइया !

मनसुखः—( सकेत से ) यह जो उस बड़े पेड़ के नीचे सोय रहे हैं ; भइया ! सो देखते हो ?

कृष्णः—हां देखत हैं भइया !

मनसुखः—याही ने उस दिन मुझे दिक किया था।

कृष्णः—वड़ा दुख भइया !

सवः—हां कन्हैया भैया !

कृष्णः—सुनहु। चुप ? ( गभीर होकर विचार करते हैं )

कृष्णः—आवो, इन की खवरियाँ लें ! देखो बोलना मत, संकेत से वात करना !

( गोपियों का माखन लिये आना )

कृष्णः- ( स्वय ) ठीक काम हुआ ! ( गोपियों से ) अभी ! मक्खन खांयगे।

पहिली गोपी:—लो लाला। ( मक्खन देती हैं )

कृष्णः—( अकड़ कर ) इतना नहीं लेंगे।

( सखाओं का प्रवेश )

दूसरी गोपी:—कितना लोगे ? आओ लाल ! मैं दूं।

( देती है )

कृष्ण:—इतना भी न लेंगे। पेट भर खांयगे।

तीसरी गोपी:—इतना तो तू खायगा भी नहीं, लाला !

कृष्ण:—( मुंह बना कर ) मैं पेट भर लूं ये क्या भूखे मरेंगे !

दूसरी गोपी:—ये मुवे हमारे क्या लगते हैं ?

कृष्ण:—मैं मुंवा तुम्हारा क्या लगता हूं ?

पहिली गोपी:—ना लाला ! तुम हमारे बेटा हो।

कृष्ण:—हूं हूं—हूं तो तुम्हारा बेटा ! मैं बेटा हूं जसोदा का। तुम्हारा कों होता ?

दूसरी गोपी:—हमारे बेटा बनोगे। तो हम मक्खन देंगी।

कृष्ण:—अच्छा मैं तेरो ही बेटो रहियो।

चौथी:—चलो थोड़ा २ सब देदो।

कृष्ण:—हम कोई भिकारी हैं।

दूसरी गोपी:—ना लाल ! तू क्यों हो भिखारी

{ कृष्ण के संकेत से सखा एक मक्खन की मटकनी उठा कर भागते हैं ग्वालन सब के बदले कृष्ण को पकड़ती हैं। }

कृष्ण:—अच्छा लाओ, जितना दो उतना ही लाओ।

पहिली गोपी:—अरे छलिया ! आज तुझे खूब दिलाऊंगी जितना हम तुझे प्यार करती हैं उतना ही तू सिर चढ़ता आता है। आज यसोदा से तेरे कान कटवाऊंगी।

कृष्ण:--चाची ! चाची ! मेरा कुछ दोष नहीं , तेरी कसम मेरा कुछ दोष नहीं ।

पहिली गोपी:--आज पता लग जायगा । तैंने ही तो इशारा किया था ।

( कृष्ण रोता है )

दूसरी:--आज इस नटखट को ले चलो ।

( कृष्ण को पकड कर ले जाती है सखाओं का मटकनी सहित प्रवेश )

मनसुख:--चलो , भइया को छुडावें ।

एक सखा:--कैसे छुडावें !

बलराम:--चाची के पैर पकड कर विनती करेंगे ।

( कृष्ण का प्रवेश )

कृष्ण:--खूब बचे ! अहा !

बलराम:--भइया वह पकड कर तो तुम्हें ले गई थीं पर तुम छूटे कैसे ?

कृष्ण:--मैं बहुत रोया चिल्लाया , मोहन छुडाने को मेरे पास आया , मैंने उस का हाथ चाची के हाथ में पकडाया और मैं भा ग आ या ।

सब:--( हस कर ) क्या कहने हैं !

बलराम:--आवो भइया ! माक्खन खावें , मटकन मैं ले आया ।

सब:--( गोद को देख कर ) इतनी सारी !

कृष्ण:—सब खाओ, मैं तो बन्शी बजाऊंगा।

सब:—अच्छा भाई! ( सब खाते हैं )

( कृष्ण बन्शी बजाते हैं तथा सब गाते है )

गान

घन श्याम! प्यारे नन्द, लला।
तेरे शीश म लग रही, चन्द्र कला।
तू तो, जीवन धारा-सब को प्यारा।
तोरे, आनन पै छारहो, तेज अनल॥
बन्शी बजैये, धुन को सुनैये।
विनती करे हम, ठाडै सकल॥
मुस्कान करो, मन मोह लैओ।
द्रग फेर श्यामा! चन्द्र कमल॥

कृष्ण—लावो, हमारा माखन लावो।

( मक्खन खात हैं तथा मुह नाक में लगा लेते हैं )

यसोदा:—( ढूंढती हुई आती है ) नाक में दम कर रक्खा है। दोनों के दोनों न जाने कहाँ चले गये। इधर अन्याई कंस को सब पता लग गया है।

( यमुना तट के निकट सब को जमा देख कर )

अरे मनसुख! तुमने सारे में ऊधम मचा रक्खा है। सच बता नहीं तो इस रस्सी से तुझे भी बांधूगी।

मनसुख:—( घबरा कर ) मेरी भी आफत आई! मैंने न तो मखनी खाई, न शक्कर ही उड़ाई!

( अपने लड़के मोहन को पकड़े एक ग्वालन का प्रवेश )

ग्वालनः—देखो नन्द रानी ! हम तुम्हारे लाल को अपने पेट का सा समझती हैं। प्यार करती हैं, पुचकारती है। पर यह इतना ऊधमी है कि बिना ऊधम मचाये बाज नही आता।

यसोदाः—मोहन की मां ! तू क्यों मस्तानी हुई है अपने लाल मोहन का हाथ पकड़ कर मेरे लाल को बदनाम कर रही है।

ग्वालनः—( संकेत से ) देखो वह बैठा खा रहा है

( कृष्ण को पकड कर लाती हैं )

यसोदाः—( कृष्ण की कमर पर रस्सी मार कर ) बता तूने मुंह माखन में क्यों साना है ?

कृष्णः—( अनजान बन कर ) मेरा मुंह ? मां ! मेरा मुह तो नहीं। मां तू यों ही मारने लगती है ऐं ! ऐं ! ऐं : ( रोना )

यसोदा.—देखा, चोरी और सीने जोरी ( मारना )

कृष्णः—मारे मति माँ ! मैं सब बताता हूं।

यसोदाः—हाँ बता। (पेड के नीचे सोये हुए ग्वाल ग्वालन का आना)

कृष्णः—( संकेत से ) इस ताऊ ने और इस ताई ने कहा तू हमारे मुंह में....

यसोदाः—( मार कर ) झूंठ !

कृष्णः—सच, इन्हों ने मेरे मुंह में यों माखन लगा दिया

{ ग्वाल ग्वालन के मुख पर माखन लगा देते है वे हटते है यसोदा कृष्ण को मारती है }

यशोदा—नटखट ! अब भी नटखटी करी ( मारना )

कृष्ण—ले मार ! मार ! मै तो आज ऊं ! ऊ ! ऊ !

ग्वालन—( छुड़ाकर ) बस ! नन्दरानी खबरदार जो लाल को अब से हाथ लगाया !

दूसरी ग्वालन—आवो लाल । ( गोद लेती है )

यशोदा—नहीं इसे छोड़ दो !

पहली ग्वालन—नहीं यशोदा, बालक है ( अपना मुह पूछ कर ) नटखट ने मेरा मुह भी तो जूँठा कर दिया !

दूसरी—तुम भूखी होगी ! ( कृष्ण से ) क्यों लाला !

कृष्ण—हाँ भूखी थी ताई !

( मन हर्षती है दोनो ग्वालन प्यार करती हुई गाती है )

गान

आप ही रोवत विहसत कबहू ।<br>रुम झुम रुम झुम चाल चले ॥

फलन करत विहसत जबहु ।<br>मानिक बिखरत आसु टले ॥

मौन भवत तो ध्यान लगावत ।<br>गिरत उठत और चलत भले ॥

कलह करत अरु जोडत मीनी ।<br>लखत न किन को जी बहले ॥

रोवत मैया विकल भवत है ।<br>चैन परत जब लागे गले ॥

( सब का प्रस्थान )

# आठवां दृश्य

**स्थान—**:कंस का दर्बार — **समय**—दो-पहर

{ सिंहासन पर कंस बैठा है। मुष्टिक अक्रूर , सखचूड, राहुक राजा अपने २ स्थानों पर बैठे हैं }

**कंसः**—राहुक जी ! विमल की मृत्यु का मुझे बड़ा संताप-है। परन्तु उस दिन मैं

**राहुकः**—विमल , वास्तव में पागल हो गया था, कई वैद्यों की ऐसी राय थी।

**अक्रूरः**—( घृणा से ) तभी तो धर्म - धर्म की हाय थी। क्यों ! राहुक जी !

**राहुकः**—न जाने क्या रोग लग गया था ! भला, अपने सुख आराम को छोड़ कर दूसरे के दुख में रोना सिड़ीपन नही तो क्या ?

**अक्रूरः**—क्या है सिड़ीपन तो है ही।

**कंसः**—क्यो राहुक जी ! आजकल मुजला कहाँ है ?

**राहुकः**—उसी ने तो मुझे हैरान कर रक्खा है। वह तो विमल से भी ज्यादा मूर्ख है।

**अक्रूरः**—( स्वगत ) ऐसे भी मनुष्य हैं ! ( प्रगट ) क्यों राजा जी ! क्या आप बता सकते हैं कि आप को यह महाराज की पदवी और कई नगर किस लिये दिये गये हैं ?

**राहुकः**—इसलिए कि मैं इस राज्य का बड़ा शुभचिन्तक हूं।

( वेणुनाथ का प्रवेश )

अक्रूरः—आ गये, देश जाति के गौरव आ गये !

कंसः—वेणुनाथ जी ! आप वृद्ध हैं, चतुर हैं, दूरदर्शी हैं। हमने आपको मन्त्री पद दिया है।

वेणुनाथ—धर्मनाश करने वाला ! महात्मा वसुदेव को कारागृह में बंद रखने वाला ! नहीं ! नहीं ! अपने पिता को राज्य से हटाने वाला ! अपनी बहिन का अपमान करने वाला आज, क्यों मेरा शुभचिंतक है ? भगवन् यह क्या रहस्य है ? जो अपने को ही नष्ट करता है—क्या वह दूसरों का दम भरता है ?

जलावे वांस को अग्नि, जो उसका जन्मदाता है।
भला फिर शुष्क पत्तों को, कहीं जिन्दा वह रहने दे ॥

( कंस से ) राजन् ! अब मेरा चौथापन आया है। देश जाति का अन्न खाया है।

अक्रूर—इसी से उनका हित मन भाया है।

वेणुनाथ—तभी तो देश रक्षा का बीज उठाया है।

राहुक—तो चलिये, आपको भगवान् ने बुलाया है।

वेणुनाथ—उन्हीं की आज्ञा से मैंने एक संग्राम रचाया है।

राहुकः—संग्राम ? किससे ?

वेणुनाथ—मृत्यु से।

राहुकः—मृत्यु से ? वेणुनाथ जी ! क्या बुढ़ापे में तुम्हें उन्माद हो गया ? महलों के सुखों को देखो ! क्यों ऐश्वर्य पर लात मारते हो ? क्यों अमृत में विष घोलते हो ?

वेणुनाथः—विष घोलता हूं या अमर बेल फैलाता हूं।

मुझे उन्माद है, यह मानता हूं और जगदीश्वर से विनय है " यह उन्माद आपको भी हो, इन्हें भी हो, समस्त देशवासियो को हो जाय ! जिससे अन्याय का सिक्का ससार से उठ जाय। वृद्धराज ! क्या इस वृद्धावस्था में भी, आपको, महलों की सजावट, भोगविलास की तृष्णा बच रही है ? यह तो आपका चौथापन है "।

बालापन तो खेलकूद में, यौवन भोग विलास गवाया।
चेत अरेमन ! वृद्धापन मे अन्तकाल अब आया ॥
कुछ तो साथ बाध तू अपने, यमपुर को अब जावेगा।
जो कुछ धर्म कमा लेगा तू, काम सोई वहा आवेगा ॥

राहुकः-बालापन मे पढ़ २ पुस्तक, पत्थर होगये सब के सब।
युवाकाल मे घर वाली ने, थप्पड़ मारे भद भद भद ॥
हारे हाथ पैर, यह भला बुढ़ापा आया है।
सेज मुलायम पर सोने का, अच्छा अवसर पाया है ॥

वेणुनाथः--राहुक जी ! नेत्र उघार कर देखो।

राहुकः--तो क्या हम अन्धे हैं ?

वेणुनाथः--सोचो, विचारो, तुम्हारी पुत्री को किसने विधवा बनाया !

राहुकः--और किसने राज्य दिलाया ? यह तो कहते ही नही !

वेणुनाथः--राहुक जी ! विमल ने देश के लिए क्या नहीं किया ?

राहुकः--तभी तो इस उम्र में मारा गया। मैं उसे मना करता था परन्तु उसने मेरी बात नहीं मानी। अब बताओ इसमें मेरा क्या दोष ।

वेणुनाथः-परन्तु उसकी कीर्त्ति संसार में अमर हो गई।

राहुकः-ऊं! उससे क्या होता है! वह तो मर गया। अपनी जान से गया। अब वह खुद तो अपनी कीर्त्ति सुनने नहीं आता। तभी तो मैं कहता हू। ऐसे ही बुरे आचरणों से शीघ्र शरीर छूट जाता है।

कंसः-वेणुनाथ जी! यदि आप इस समय मेरी ओर हो जायेंगे। तो धन, ऐश्वर्य से मालामाल कर दूंगा।

वेणुनाथः-कंस! बूढा वेणु--कहीं ऊंचे खयाल का आदमी है।

कंसः-तो इन्कार है?

वेणुनाथः-बिल्कुल--साफ़ इन्कार है।

कंसः-तुम राजद्रोही हो?

वेणुनाथः-परन्तु धर्मद्रोही नहीं॥

कंसः-हट्टी हो?

वेणुनाथः-अधर्मी नहीं।

कंसः-अपनी संतान के शत्रु हो?

वेणुनाथः-परन्तु देश का शत्रु नहीं।

कंसः-मूर्ख हो!

वेणुनाथः-परन्तु अत्याचारी नहीं।

कंसःवेणुनाथ ! सोचो, सुख शान्ति, स्वच्छन्दता का ध्यान करो। अपनी अवस्था का विचार करो।

वेणुनाथः—मैं तो जानता ही नहीं, सुख शान्ति किसे कहत है !—दूसरे के लिए दुख भोगने में कैसा सुख मिलता है। कर्तव्य का पालन करने के लिए दरिद्रता भोगना कैसी अच्छी बात है। प्रातःकाल सूर्य की सुनहरी किरण जिस स्नेह के साथ दरिद्रता की कुटिया पर पड़ती है, वैसी तेरे महलों पर पड़ती। मैंने खूब सोचा—खूब विचारा। मैं तेरे अत्याचर को पोषण करने के लिए भगवान की अवज्ञा नहीं कर सकता।

कंसः—वेणुनाथ ! खूब सोच लो, कंस दया नहीं जानता।

वेणुनाथः—तभी यह बूढ़ा वेणू तेरी आज्ञा नहीं मानता।

कंसः—क्या मेरी आज्ञा नहीं मानोगे ?

वेणुनाथः—भगवान की आज्ञा के सामने किसी को भी आज्ञा नहीं मान सकता।

कंसः—( मुष्टिक से ) मुष्टिक ! बन्दी बनाओ।

वेणुनाथः—तेरी आज्ञा अब भी नहीं मान सकता।

कंसः—मत मानो, कारागृह की यातना तो भोगनी ही पड़ेगी। ( मुष्टिक हाथ बांधता है )

गान

वेणुनाथः—बजाऊं चाकरी तेरी, या सेवा अपने ईश्वर की।
बढाऊं राज्य को तेरे; या रौनक अपने म घर की॥
मुझे धिक्कार है जो मैं, चरण सेवा मे लग जाऊं।

क जिस ने है बनां रक्खी; बुरी हालत मेरे घर की॥
प्रजा के रक्त को पीकर, बना पापी महा कामी।
तेरी हस्ती मिटाने को, यह आयु अब निछावर की॥
मेरे इस डूबते सूरज, के हैं अब आखिरी ये दिन।
है काफी नाश करने को; इस हस्ती राज नश्वर की॥
न फूलेंगे फलेंगे वह, अधीनों को सताने से।
मिटा देगी ये राजा को भी हा! हा! हाय घर २ की॥

वेणु—(हाथ छुड़ाकर जाते जाते) यदि कोई वीर है तो आकर पकड़े!

कंस—ओह! पकड़ो मुष्टिक! पकड़ो संखचूड़।

('दोनों पकड़ने जाते हैं')

कंसः—ओह! कितना साहसी है!

राहुक—बात भी तो ठीक कहते हैं।

कंस—क्या तुम्हारी भी वैसी इच्छा है?

राहुक—(घबरा कर) नहीं महाराज!

कंसः—राहुक जी! वेणुनाथ के बजाये तुम्हीं सेना लेकर वासुदेव की प्रजा का दमन करने जावो।

राहुकः—सेना? नहीं महाराज मैं यहीं सन्तुष्ट हूं। मैं कहीं बाहर नहीं जा सकता।

अक्रूर—क्या आप लड़ाई से डरते हैं?

राहुकः—हां भाई! लड़ाई से कौन नहीं डरता? नहीं महाराज जी! मैं लड़ नहीं सकूँगा। लड़ने भिड़ने के डर से

तो मैंने अपने आपको आपकी दया पर छोड़ दिया है। ( स्वगत ) यदि लड़ने भिड़ने से न डरता तो विमल की मौत का बदला न लेता।

अक्रूरः-लड़ाई में डर क्या है ?

राहुकः-तो यह शरीर नष्ट कर दूं ?

अक्रूरः-अच्छा ! तो आप मौत से डरते हो ?

राहुकः-अरे मौत से कौन नहीं डरता ?

ऋषि और मुनि खाये, ध्यानी और ज्ञानी खाये, खाये वीर मृत्यु ने।
राजा और रंक खाये, कायर और निशंक खाये, खाये धीर मृत्यु ने ॥

( कंस से ) बस महाराज जी ! मैं बाहर कहीं नहीं जाना चाहता।

कंसः-तब मालूम होता है आप भी वसुदेव से मिले हुवे हैं ?

राहुकः-( घबरा कर ) नहीं महाराज !

कंसः-तब इन्कारी क्यों ?

राहुकः-( स्वगत ) जाता हूं तो लड़ाई में मारा जाता हूं, न जाता हूं तो सूली पर चढ़ाया जाता हूं। बड़ा हैरान हूं, कोई तदवीर ठीक न पाता हूं। ( विचार कर ) सूली पर तो बच नहीं सकता। शायद लडाई पर बच जाऊं ! चलो वहीं जाऊं ! ( प्रगट ) अच्छा महाराज ! चला जाऊंगा। ( स्वगत ) पर यह, है बहुत ही बुरी बात, बड़ी कृतघ्नता जिस राज्य की इतनी सेवा की, वहां बुढ़ापे में यह दुर्गति ! भगवान् !

( धीरे २ प्रस्थान )

---

# नवां दृश्य

स्थान—गोकुल ग्राम के बाहर का मार्ग

समय.— तीसरा पहर

( कृष्ण वलराम का फकीरी वेश में प्रवेश )

कृष्ण—अब बहुत सुधार हो गया है और बहुत उपकार हो गया है।

वलराम—नारद जी ने तो अब यही राय दी है कि तुम सभ्यता से काम लो। घबराये हुवों को धैर्य्य दो। और बल बुद्धि से इस राज्य को मिटादो।

कृष्ण.—अब मैं भी अनुभव करने लग गया हूं। तुम्हारी और हमारी शक्ति, तुम्हारा और हमारा बल, कंस का नाश करने को बहुत है। परन्तु प्रजा इसमें हस्ताक्षेप तो न करेगी? यही सशय है।

वलराम:—तभी तो नारद जी ने कहा था कि ऐसा यत्न किया जाय कि जिससे सब प्रजा राजा के विरुद्ध हो उससे सम्बन्ध तोड दे। शान्ति भी रहे और अन्त्येष्टि भी हो जाय। सब इस राज्य से सम्बन्ध तोडने के लिए बेचैन हैं वे कभी भी समय पर कंस के साथी न होंगे।

कृष्ण:—परन्तु राजा राहुक और कुम्भ तो उसकी ही ओर हैं।

बलराम:—उसका नाम भी न लो। कुलघाती—कायर

श्रृगाल ! हां, महाराजा कुम्भ को समझाना चाहिये। चलो वहां के कार्य को छिप कर देखें। ( दोनों का प्रस्थान )

( स्त्री, पुरुष, बालक, वृद्ध धीरे २ आकर बैठते हैं। )

देवदत्तः—( खड़ा होकर ) सब को विदित हो कि आज हम अनर्थों के मिटाने के लिये ही इस स्थान पर इकट्ठे हुवे हैं। कंस ने अपने पिता, पूजनीय पिता को राज्य से उतार, उस महात्मा का अपमान करके राज ग्रहण किया है। प्रजा को सुखी रखने वाले उग्रसेन, धर्मात्मा व प्रजाभक्त राजा को हटाने का उसे कौन अधिकार था ? क्या ऐसे पापी को आप राजा मानने के लिए तैयार हैं ?

सब:—हरगिज़ नहीं। कभी नहीं।

देवदत्त:—माना प्रजा का निर्वाह बिना राजा के नहीं हो सकता। परन्तु प्रजा जिस प्रकार राजा से प्रेम रखता है राजा को भी उसी प्रकार प्रेम रखना चाहिये। यदि राजा प्रजा का पिता बनना चाहता है तो प्रजा को अपनी संतान समझे।

बजेगी तालियां, दोनों ही हाथों के हिलाने से।
बनेगा राज भी उत्तम; प्रजा राजा मिलाने से॥

श्रोतावो ! राजरानी देवकी — अपनी बहिन का ही जिस ने इतना अपमान किया है, वह कब किसी दूसरे का शुभ-चिन्तक हो सकता है। भाइयो ? भूल न जाना। दशरथ ने अन्धकार में, श्रवण कुमार—निर्दोष श्रवण को गलती से मार डाला था, जिस का परिणाम दशरथ की मृत्यु हुई। बतावो ! निर्दोष, नवजात छोटे २ बच्चों के सिर काटने वाले का नाश न होगा ?

सब—अवश्य होगा, निश्चय होगा। भगवान ख़बर लेंगे।

देवदत्त—हमारे महाराज वसुदेव को, महारानी देवकी को राज्य से हटा कर—नहीं, नहीं, हमारा प्यारा, सब का सहारा विमल कुमार — हा! विमल कुमार का वध करके ही राज्य में अन्याय की दूषित वायु को फैला रहा है। हाय! हमें धिक्कार है! हम अभी तक नींद में हैं, प्रजा पर, दीन प्रजा पर—दुखी प्रजा पर कितना अत्याचार किया जा रहा है। अरे कायरो! क्या इस अत्याचार को सहन करते रहोगे? क्या इस अन्याय को मिटाने के लिए अपने क्षणभंगुर जीवन की आहुति न दोगे?

एक युवक—हम, तब तक न चैन पायेंगे।
जब तक, इस अन्याय को न मिटायें॥

दूसरा युवक—बच्चे २ को जाकर, यह सम्वाद सुनाऊंगा।
करता हूं यह प्रतिज्ञा, इस राज्य को मिटाऊंगा॥

( कृष्ण बलराम का गाते हुवे प्रवेश )

गान

जुगत से वीणा वजे भगवान। टेक
जैसे पाठ शुरू किया है,
जौन से मारग पैर दिया है;
हो उस में कल्याण॥ १॥
पूजा को कर्तव्य सिखावें,
अत्याचारी को शीघ्र पिटावें;

राखे धर्म को ध्यान ॥ २ ॥
मात पिता को हमें छुडाना,
अत्याचार का राज्य मिटाना ;
मिट जाये चाहे जान ॥ ३ ॥
दुष्ट राज्य योंही मिटते रहेंगे,
धर्म के डंके बजते रहेंगे ;
करके मंगल गान ॥ ४ ॥
तार एकता के नहीं टूटें,
अंकुर वैर विरोध न फूटें;
संग ठन बने बलवान ॥ ६ ॥

**देवदत्तः**—आये, जाति के आधार आये।

दीखता निश्चय निकट अब काल हम को कंस का ।
बस नाश जानो हो गया निश्चय ही उसके वंश का ॥

कृष्णः नारद जी की आज्ञा से मुझे अब कार्य क्षेत्र में उतरना पड़ा है। प्यारे देश भक्तो! बतावो, अब कंस को मिटाने में आप सब राज़ी हैं।

सबः—हां —

देवदत्तः—हम सब राज़ी हैं, तैयार हैं। इस अन्याय को अब सहन नहीं कर सकते।

कृष्णः—यदि ऐसा ही है तो इस राज्य को किसी प्रकार की सहायता न दी जाय।

मर जाना, मगर टलना नहीं आन से।
आन रहे, जावे भी यदि जान से॥

**बलराम**—जो सम्बन्ध रक्खे उससे, तुम, उसका साथ छोड़ दो।
है दास कंस के जो, उन से आज नाता ही तोड़ दो॥
छोड दो टहल उन अन्याइयों की आज से।
परछाई, पै उन की अपना पैर रखना छोड़ दो॥

**कृष्ण**:—नष्ट करना है हमें, निश्चय ही अब इस कंस को।
संसार से निश्चय मिटाना, आज इस के वंश को॥
तब तक रंगे रहेंगे, हम इसी रंग रूप में।
माता पिता उद्धार में जब तक न इसका ध्वंस हो॥

**यशोदा**:—नहीं, मैं अपने लाल को प्राणों के आधार को जलती हुई अग्नि में नहीं फूंक सकती।

**कृष्ण**:—मैया! मैं अभी कंस को मारने नहीं जा रहा हूं। कंस बडा बल शाली है। उस के पास बल है, सेना है। मैं संगठन के लिए आप से विदा मांगता हूं। मुझे राष्ट्र का सङ्गठन करना है। जिस से कोई भी मनुष्य इस राज्य का शुभचिन्तक न रहे।

सब अंग कट जायें—ईश्वर करे इस राज्य के।
शत्रु भी हो पाये नहीं, पक्ष पर इस राज्य के॥
तब कंस का विध्वंस करना, शेष बस रह जायगा।
हट जायेंगे पद छोड़ कर—कर्मचारी सब इस राज्य के॥
दोनों का बल बलराम का, बलवान बनेगा।
कंस के विध्वंस से, मिले चिन्ह नहीं इस राज्य के॥

इस कारण मैया ! हम अब महाराजा कुम्भ को अपनी ओर करना चाहते हैं। आप से कर जोड़ विनती है कि हम दोनों को आज्ञा मिले।

सब:—नहीं हम सब चलेंगे।

एक युवक:—हम आप को इकला न जाने देंगे।

कृष्ण:-हम अब निरे बच्चे ही नहीं हैं। हमें अत्याचार को मिटाने के लिये, अधर्म को परास्त करने के लिये धर्म तेज की आवश्यकता है। आत्म तेज ही इस अत्याचार को मिटा देगा। अधर्म पर रहने वाले पापी-कंस-नही २ पृथ्वी तक को उठाने वाले वीर भी यदि धर्म पक्ष पर रहने वाले, जीर्ण देह वा.., निर्बल वृद्ध मनुष्य से युद्ध करें, तो हार जायेंगे। हम तो फि भी मनुष्य हैं।

यशोदा:-लाल! कंस बड़ा पापी है, उस के अनेक योद्धा तुम्हा े घात में हैं।

कृष्ण:-मैया! फिर भी वे सब पापी हैं, अत्याचारी हैं। पापी कंस के लिये सहस्रों कृष्ण बलराम पैदा हो जायेंगे।

सब:-इकला नहीं जाने देंगे।

बलराम:-भइया कृष्ण ! नारद जी के बताये यत्न को क्यों नहीं काम में लाते? उन के बताये योग चमत्कारों को क्यों नहीं दिखाते?

कृष्ण:-हां सच है (सब से) कंस धर्म के सन्मुख कोई हस्ति नहीं रखता। क्या यह सच नहीं है?

(अचानक अनेक कृष्ण बलराम का हो जाना)

सब:-अहा! अहा! योगी-

देवदत्तः—अहा ! योगी बालक ! कृष्ण कुमार ! हमारी आशाओं के आधार आओ। देश से अत्याचार, अन्याय, अन्धकार को मिटाओ।

यशोदाः—आवो बेटा आवो।

( यवनिका पतन )

पहिला अंक समाप्त

# दूसरा अंक

## पहला दृश्य

समय —रात्रि

स्थान —वेणुनाथ के महल का अन्तःपुर

( अक्षय कुमार की पत्नी लक्ष्मी का सखियों में आमोद प्रमोद करना )

गान

सखियें —नील गगन, मनवा मगन, सुन्दर वदन सखी ! रीझ २ मुसकाओ।

पहली सखीः—प्यारी उदासी देखो, मुख पर न हासी देखो, प्रेम पियासी, देखो ॥

**सब सखियें:**—कुमोदनी ! कमलनी ! प्यारी हमारी मन बहलाओ।१।

**लक्ष्मी:**—माली नहीं, जल नहीं, स्वामी नहीं कुंजन में।

फल कैसे लगें, और फूल खिलें, सखी ! वृक्षन में॥

आओ, चातक की प्यास बुझाओ, दासी को धीर बधाओ।२।

**पहली सखी:**—प्यारी उदास सदा रहती हो क्यों ?

**दूसरी सखी:**—सुनो प्यारी पपीहा बोल रहो है।

**लक्ष्मी:**—मोरे पीया के पी पी ही आज सुनाओ।३।

[ कमला का प्रवेश ]

**कमला:**—भाभी ! सुनोगी ? भैया की प्रशंसा सुनोगी ?

[ लक्ष्मी का चुप रहना ]

**कमला:**—भाभी ! क्यों ? तुम बोलती क्यों नहीं ?

**लक्ष्मी:**—सुनूँगी कह—तू बता तूने अपने भइया से क्या शिक्षा ली ?

**कमला:**—शिक्षा ? बड़ी शिक्षा ली है। मैं नित्य अपने बनाये क्षेत्र में जाती हूं। भूखों को भोजन खिलाती हूं। मुझे इसमें बड़ा आनन्द आता है भाभी ! (सखियों का प्रस्थान)

**लक्ष्मी:**—कमला ! तेरा जीवन धन्य है !

**कमला:**—क्यों भाभी ? और तुम्हारा ?

**लक्ष्मी:**—मेरी बात न पूँछ—क्यों कमला ! तेरे भइया तुझे इस काम से रोकते तो नहीं ?

**कमला:**—रोकते ? पिता जी ने तो अपने धन से क्षेत्र बनाया है और भइया उसकी रेख देख करते हैं।

लक्ष्मीः—इससे तुझे क्या लाभ ?

कमलाः—इससे बड़ा लाभ है—भारी सुख है। दूसरों को सुखी रखना ही सुख है, अपने को सुख देना तो निरा पशुपन है।

लक्ष्मी—तेरे भैया भी यों ही कहा करते हैं।

कमला—हां भाभी! उनके उपदेश से मुझे बड़ा आनन्द मिला है।

लक्ष्मी—( स्वगत ) नाथ! जिस सुख के लिए संसार भटकता है उसे तुम संसार को दे रहे हो। परन्तु तुम्हारी चिरसंगिनि, अनुगामिनि उससे अभी तक वंचित है। नहीं प्रियतम! मुझ पर प्रेम नहीं।

कमला—क्या कहती हो भाभी? क्या भैया तुम्हें चाहते नहीं? नहीं, वे तुम्हें हृदय से चाहते हैं।

लक्ष्मी—हां, बहुत चाहते हैं। तभी तो आधी रात होने को आई—अभी तक नहीं आये।

कमलाः—नहीं भाभी कहीं कुछ सलाह करते होंगे वा किसी दीन दुखिया की खबर लेते होंगे।

लक्ष्मी—हाय! दीन दुखिया, संसार भर उनकी दया प्रेम का भोग भोगे और मैं उनकी अर्धाङ्गिनी होकर उनके चन्द्रमुख दर्शन के लिए चकोरी बनकर छटपटाया करूं, प्रेम की प्यास से चिल्लाया करूं!—क्यों कमला तुम्हारे भैया बड़े दयालु हैं ना?

कमला—इससे क्या? तुम्हारा भी तो उनपर प्रेम है!

लक्ष्मी—हाँ है।

कमलाः—प्रथम तो वे तुम्हें चाहते हैं और अगर मान भी लूँ कि वे तुम्हें नहीं चाहते—तुम तो उन्हें चाहती हो ?

लक्ष्मीः—( सांस ले कर ) अरी कमला तू इन बातों को क्या जाने। पति पत्नी के प्रेम को क्या पहचाने—अच्छा मैं तेरे भैया को बिल्कुल नहीं चाहती।

कमलाः—नहीं चाहती ? सारा संसार तो मेरे भैया के प्रेम पर प्राण देने को तैयार है। और भाभी तुम

लक्ष्मीः—अहा अब तो बड़ी व्याकुल हुई। बहिन कमला ! अगर मैं तेरे भैया को नहीं चाहती तो इसमें हानि ही क्या है ?

कमलाः—अच्छा भाभी ! तू मत चाह, परन्तु वे तुझे हृदय से चाहते हैं, प्राणों से अधिक—( कण्ठ रुक जाता है )

लक्ष्मीः—बस इतने पर ही रोने लग गई ( कमला के आंसू पोंछ कर ) कमला ! तेरे भैया को छोड़ मुझे दुनिया में कुछ प्यारा नहीं। ( बात का रुख बदल कर ) हां कमला ! तू तो कहती थी विवाह ही न कराऊंगी। अब भी तो सहमत हुई।

कमलाः—कब भाभी ? कब ? मैं कभी विवाह से सहमत नहीं मैं विवाह न कराऊंगी। मैं बालब्रह्मचारिणी रहूंगी। पिता जी और भैया दोनों मेरे इस काम से प्रसन्न हैं।

लक्ष्मीः—और मन ?

कमलाः—मन की बात जाने दो भाभी ! मैं मन को अपने वश में रखती हूं। मैं उससे काम लेती हूं, उसे बांध कर रखती हूं। मैं सब जीवों पर दया करती हूं पर मन में अति कठोर हूं, मैं उससे इतना काम लेती हूं कि वह तंग आ जाता है। बस छोड़ते ही थक कर सो जाता है।

( अक्षय का अति साधारण वस्त्रों मे प्रवेश )

कमला –लो वे आ गये भैया । ( दूसरी ओर प्रस्थान )

लक्ष्मी --( हाथ फैला कर ) दाता की जय हो ! कुछ दान मुझे भी दोगे ? मैं तुम्हारा नाम सुन कर आई हू ।

अक्षय –( होश म ) ओ हो ! हम दानी ! कहो प्रिये ! क्या दान चाहती हो ?

लक्ष्मी:–लुटाते प्रेम जग को, सदा तुम कोष अपने से ।
मगर दासी तुम्हारी, प्रेम बिन भूखी तडपती है ॥
दया का है बरसता जल, हरएक दुखिया की कुटिया पर ।
यहा अधिकारिणी धन धाम को तुमरी दया बिन हा तरसती है ।
अक्षय —न खाती है, खरचती है. कभी धन धान्य तू अपना ।
जरूरी जान कर उस को ; मैं दुनिया को खिलाता हू ॥

लक्ष्मी·— नाथ ! अनेक बार सोचा और यही परिणाम निकाला कि "दासी ने तो अपराध नहीं किया" ।

अक्षय —प्रिये ! यह कहता कौन है ?

लक्ष्मी —तब मेरे आराध्य देव मुझ से क्यों रूठ गये ?

अक्षय·—चन्द्रमुखी से ? कमलिनी से ? प्रिये ! तुम से मैं रूठ सकता हूं ?

लक्ष्मी.—नाथ ! मैं कुछ अधिक नहीं जानती । मै आपकी दासी हूं । आप मुझ से अलग न हों । यही दासी की अभिलाषा है । परन्तु जब से कस राजा हुआ है तब से न जाने किस ओर आपकी जीवन नौका बहने लगी है ! राजसी ऐश्वर्य को छोडकर प्राणधन ! आपका यह वेश ? मेरे प्रेम

पर, मेरे अनुराग पर आप को दया नहीं । क्या यह सौन्दर्य यह युवा अवस्था निरर्थक है ?

अश्व:--निरर्थक है ? सौन्दर्य ! युवा अवस्था ! !— प्रिये ! युवा अवस्था और सौन्दर्य पांचों तत्वों का मेल हैं । इन के अलग होने से सब नीरस हो जाते है । हम और तुम दो जीव है, जो अपने कर्म फल से शरीर में बस रहे हैं। परोपकार, सत्यधर्म और दया का पालन ही बन्धन से छुडा कर आनन्द दिला सकता है ।

लक्ष्मी:-तो क्या संसार के सब पदार्थ वृथा है ?

अश्व:—वृथा नहीं उपयोगी है । परन्तु हमें इन का दास न बनना चाहिये । प्रिये ! नाना प्रकार के स्वादु भोजन, कोमल वस्त्र, सुन्दर गहने, महल और अटारियाँ यह सब संसार में विषय वासनाओं की सामग्री है । जीव इन में फंस नाना प्रकार के दुखों को भोगता है ।

लक्ष्मी:-तो नाथ ! गृहस्थ भी दुखों का घर है ?

अश्व:-नहीं कदापि नहीं । गृहस्थ एक समाज है और स्त्री पुरुष उस के प्रधान कार्य कर्ता हैं, मुख्य सभासद हैं ।

लक्ष्मी:-तो क्या नाथ ! सब गृहस्थी उसी धर्म—

अश्व:-प्रिये ! समय की रीति निराली है । देश में कितना अत्याचार हो रहा है । अन्यायी राजा प्रजा को सता रहा है । प्रजा राज पुरुषों के भीषण अत्याचार से त्राहि २ कर रही है । क्या प्रिये ! ऐसे हाहाकार के समय में हमें एकान्त स्थान में विषय-वासनाओं में, नाच रंग में रहना उचित है वा इस अग्नि को इस अत्याचार को नष्ट करना ? ( लक्ष्मी की कटि में दोनों भुजा डाल कर ) प्रिये ! अब बताओ, क्या मैं केवल तुम्हीं पर प्रेम करूं ?

लक्ष्मी:—नाथ ! तुम सारे संसार पर प्रेम करो। अपने उदार हृदय में सारे विश्व को भरलो । मैं अति क्षुद्र हूं जो अपने क्षुद्र हृदय में तुम्हारे आकाश हृदय को बन्द करना चाहती हू ।

अक्षय.—प्रिये ! हम दोनों गृहस्थ रूपी समाज के सभासद हैं । हमारा कर्तव्य है कि हम संसार का भला करें । विषय वासनाओं का समय वीत गया। अब तपस्या का युग आया है। इन आभूषणों को, इन रेशम के वस्त्रों को फेंक दो। भोगों पर लात मारो ( जेवर उतार कर फैंकते हैं ) हृदयेश्वरी ! मेरी तरह तपस्विनी बनो ( एक भगवा कपडा देना ) धर्म पर कटिबद्ध हो जावो। परमात्मा से प्रार्थना करो वह तुम्हें उत्साह दे, बल दे तथा धैर्य दे। प्रिये ! अब मुझे युद्ध के लिए विदा दो।

लक्ष्मी:—( रोकर ) नाथ ! युद्ध के लिए ?

अक्षय.—यह क्या ? ऐसे शुभ अवसर में रोती हो ?

लक्ष्मी.-नाथ ! अन्तिम रोना है। इसके बाद न रोऊंगी। मेरी आपको विदा है। जो आप का धर्म है वही मेरा भी है । आप युद्ध में जाइये, मैं ग्राम २ फिरूंगी। इस राज्य से तिलाञ्जलि दिलाऊंगी। जाओ जीवन धन ! जाओ। ऐ दुष्ट राज्य ! तेरे ही निमित्त न जाने कितने इस राज्य में रंगे जांयगे ! नाथ ! कृतार्थ करो दासी को, अन्तिम दर्शन से कृतार्थ करो । चलो प्रियतम ! मैं आपको युद्ध के लिए सुसज्जित करूंगी।

अक्षय.—आओ प्रिये !

लक्ष्मी -हां, चलो नाथ ! ( अक्षय का प्रस्थान )

अक्षय.—जाओ स्वामी ! इस युद्ध में, मेरा सच्चा स्नेह, मेरा असीम अनुराग अभेद्य कवच की तरह तुम्हारी रक्षा करेगा। शत्रु की तलवार तुम्हें छू भी न सकेगी।

## दूसरा दृश्य

स्थान—छावनी में राजा राहुक का स्थान ( डेरा )

समयः—सन्ध्या

( राहुक का प्रवेश )

राहुकः—घोर अन्याय है-भारी कृतघ्नता है। या तो युद्ध में आओ, वरना राज्य पद से च्युत । पुत्री विधवा हो गई परन्तु हमारी निद्रा न टूटी । न टूटे, ईश्वर करे यह निद्रा न टूटे, कायरता मैया ! मुझे संसार छोड दे, परन्तु तुम मत छोड़ियो । तुम्हारी ही कृपा से मेरी दिन दूनी रात चौगनी उन्नति हो रही है। धन्य है ! कायरता देवी ! धन्य है तू !!

( नेपथ्य में वज्र का शब्द )

राहुकः—(चौंक कर ) अरे रे-हाय रे रे ! सेनापति ! सेनापति ओ ! सेनापति ! ( सेना पति का प्रवेश )

राहुकः—ये भयानक शब्द किस का है ? ( पुनः शब्द ) हायरे हाय।!

सेनापतिः—क्या महाराज ? ( पुनः शब्द )

राहुकः—अरे ! येही-यही, हाय ! हाय !

सेनापतिः—कुछ नहीं महाराज ! योधा लडना सीख रहे हैं।

राहुकः—( क्रोध में घबराकर ) लड़ना सीख रहे हैं या हमें मारना सीख रहे हैं ?

सेनापतिः—महाराज ! ये गदा युद्ध सीख रहे हैं।

राहुकः—अच्छा इन से कह दो कि दूसरी ओर को मुंह करके लड़ें ।

( सेना पति का प्रस्थान )

राहुकः—( आकाश को देख कर ) अरे! यह क्या ? विमल! अरे तुम खून में क्यों भीग रहे हो ?—डर लगता है मेरी ओर घृणा से मत थूको। मैं अभी मथुरा चला जाता हूं। जाता हूं भाई जाता हूं।

( सुमन्त बालक का प्रवेश )

राहुकः—बेटा सुमन्त! अभी चलो—मथुरा चलो। देखो यह सामने वसुदेव मारने को आ रहा है। वसुदेव! भाई मैं अभी मथुरा को लौट जाता हूं।

सुमन्तः—नाना जी! महाराजा वसुदेव तो कैद में है। हम सब अब कृष्ण के साथ मिल जुल कर रहेंगे।

राहुकः—अरे किस मूर्ख का नाम लिया। तेरा पिता—

सुमन्तः—वे तो धर्म के लिये स्वर्ग गये।

राहुकः—इतने बड़े राज्य का विरोध करना धर्म है! ( बात का रुख बदल कर ) अरे! क्या तुझे मच्छर नहीं काटते ?

सुमन्तः—देखते नहीं ! कृष्ण कितने बलवान हैं।

राहुकः—हूं हूं! अरे! देख तो रबड़ी वाला हो तो रबड़ी ही ले आ ( दाम देते हैं—सुमन्त का प्रस्थान )

राहुकः—बच्चों को बहलाना कितनी बड़ी बात है। अब तो चार दिन के बालक भी विद्रोही हुवे जाते हैं। पिता ने किया क्या ? अपनी जान से ही तो गया! जब तक राज्य तेज है कौन हटा सकता है ? एक वह कृष्ण है। जहां देखो वहां ब्राह्मणों की दुष्टता! वह बेचारा गरीब ब्राह्मण नारद! पहले तो उसने वसुदेव के पुत्र मर वाये अब कृष्ण की भी इति श्री करना चाहता है।

" समुद्र में निवास करि मगरमच्छ सों वैर न करिये "

( सुमन्त बालक का रबड़ी खाते २ प्रवेश )

सुमन्तः—( स्वगत ) नाना जी समझते होंगे, मैं कुछ सुन ही न रहा था। मैं यहां खड़ा २ सब सुन रहा था। ( प्रगट ) नाना जी ! अजी नाना जी ! रबड़ी खाओगे ?

राहुकः—( चौंक कर ) अरे आ गया तू ?

सुमन्तः—नाना जी ! एक बात है।

राहुकः—कहो बेटा !

सुमन्तः-अगर आदमी से कुत्ता छू जाय तो उस से घृणा करनी चाहिये वा प्रेम ?

राहुकः-अरे पागल ! घृणा करनी चाहिये। उस से प्रेम कौन करेगा ?

सुमन्तः-तो नाना जी ! फिर तुम क्यों कंस की जूठन खाते हो ?

राहुकः-अरे चुप रह अगर कंस सुन लेगा तो तेरे बाप की तरह तुझे भी मरवा देगा।

सुमन्तः-( क्रोध में ) मेरे पिता को क्या इसी ने मारा है ?

राहुकः-हां बेटा !

सुमन्तः-मां तो कहती थी बीमार हो गये थे। ( क्रोध में ) झूठी मां ! पाजी कंस ! हटो नाना जी हटो मुझे मत छूना- हाय ! -पिता जी ! तुम्हारी मौत का बदला मैं लूंगा। -हूं ! ( सुजला का प्रवेश )

सुजलाः—बेटा ! बेटा ! अधीर मत होवो। तुम्हारे पिता की मौत का बदला तुम्हारी माँ लेगी।

सुमन्तः-( स्वगत ) लेगी तो ? मैं लूंगा हूं, हूं, ।

राहुकः-कौन ? बेटी सुजला ।

सुजलाः-( सुमन्त से ) बेटा ! मैं तुम्हें छोड कर ही संन्यासिनी हुई हू । मेरे लाल-मेरे सर्वस्व आओ ( गोद लेती है )

राहुकः-( कातर भाव से ) बेटी सुजला !

सुजलाः-पिता जी ! अपने पापों का प्रायश्चित्त करो ।

( सुजला व सुमन्त का प्रस्थान )

राहुकः-यह क्या हुवा ? किसने मेरे अन्धकारमय हृदय के कपाट को खोल दिया ? शृगाल के कायर-सकीर्ण हृदय में मृगराज का तेज कहां से आ गया ? भगवन् ! मुझे स्वार्थ पूर्ण कटक मार्ग से खींच कर परमार्थ के कुञ्जवन में कौन ले आया ? कायरता देवी ! कायरता मैया ! यद्यपि मेरा सब गौरव जाता रहा सब कुछ नष्ट भ्रष्ट हो गया परन्तु तुम मुझे मत छोड़ो । नहीं, नहीं, यह सब ठीक हो रहा है । मुझे अब जागना है, भय से भागना है । पराये टुकडों की आशा दूर-दूर हो जा ! सुजला ! तेरे बेटे ने ही मेरे नेत्र खोल दिये । ठहरो, बेटी मैं भी आता हू । कंस ! कंस !! ओ कंस !!! अब तेरा बचना सच मुच कठिन है । ( प्रस्थान )

---

# तीसरा दृश्य

**स्थानः**—राजा कुम्भ की बैठक।

**समयः**—रात्रि

{ कालीन पर कुम्भ राजा बैठे हैं। पास दो मुसाहब बैठे है। सामने मद्य आदि के पात्र रक्खे है, मदन मंजरी वेश्या नाच रही है। }

गान

अनुराग की कली खिली हर ओर ओर ये। टेक
नभ चन्द्र ये, मकरन्द हैं सुगन्ध से।
वह गंध ये आनन्द मे हर ओर ओर ये॥
प्रीतम बिना, पड़े चैन ना, कटे रैन ना।
मन यों जरे—भ्रमता फिरे, हर ओर ओर ये॥
चलो वहा—हैं प्रेमी जहा, पड़े चैन कहा।
वियोग, की अग्नि दहे—हर ओर ओर ये॥

**मुसाहबः**—वाह! वाह! मदनमंजरी खूब नृत्य किया।

( पाचक का प्रवेश )

**पाचकः**—भोजन तैयार है।

**१मुसाहबः**—गाना तो सहल हैं, क्यों मिस्सर जी?

पाचक.—अभी तैयार किया है।

१ मुसाहब:—तुम गाना तो खूब जानते हो ?

पाचक:—भोजन हम ने वक्त से बनाय लीनो।

दूसरा मुसाहब:—तुम नाच भी तो सकते हो ?

पाचक —हम ने पूरी हलवा बनायो है।

१ मुसाहब —( क्रोध में ) अच्छा जावो।

( पाचक का प्रस्थान, नैपथ्य में कृष्ण का गान )

गान

कुछ तो सोच समझ ले मूरख, किस कारण से आया है रे।
बडे पुन्य से नर तन पाया, भोग विलास तैं खोय गंवाया॥
उन को कुछ नहीं तै दीना है, जिन का धन तै पाया है रे।
जवाब प्रभु को क्या देवेगा, जिस ने तोहे पठाया है रे ॥२॥

( गाते हुवे कृष्ण बलराम का प्रवेश )

कुम्भ —( स्वगत ) यह अचानक मेरे हृदय के अन्दर आँधी सी क्या चल रही है।

गान

कृष्ण बलराम:—अन्त करण बतलाय रहा है
उच्च नीच सुझाय रहा है
जोकर्तव्य भुलाया है रे ॥३॥

कुम्भ:—बालक ! तुम कौन हो ?

कृष्णः-जाति का लाल भारत का पुत्र , धर्म का अनुचर ।

कुम्भः-वीर बालक ! तुम इस साधु वेश में क्यों हो ? तुम्हारा रूप तो क्षत्रिय कुल का बोध कराता है ।

कृष्णः-क्षत्रियों ने जब क्षत्रित्व को त्याग कर शिकारियों का वेश बनाया है । तब हम ने भी अपने को साधुवों के वेश में छिपाया है ।

पहलामुसाहब:-उद्धत बालक ! नहीं जानता तू किसके सामने क्या बक रहा है ?

कृष्ण:-खूब जानता हूं, सब पहचानता हू ।

वीरता का घोट गला, शूरत को मार कर ।
शक्ति मद से अन्ध, कंस की भेरी वजाई है ॥
निर्बलों की रक्षा छाड़ि, साधुवों को ख़ूब ताड़ि ।
पेट फाड़ फाड़, पापियों की कीन वड़ाई है ॥
नृप राज, हुवे आज, किस काज दल आयो सारा ।
निर्बलों का ध्वसं कर, सेना पाप की बढ़ाई है ॥
लाज २, शोक आज, क्षत्रिपन को तिहारे ।
स्वाधीनता को छाड़ि, पराधीनता की वेड़ी पहनाई है ।

कुम्भः-( स्वगत ) ये क्या ! हृदय में बड़ा पश्चाताप हो रहा है ( प्रगट ) बालक तुम कौन हो ?

कृष्णः—हम ग्रामीण, जंगली मनुष्यों के दूत हैं ।

कुम्भः—दूत ? जंगली मनुष्यों के दूत ? तुम्हारे एक एक शब्द में सभ्यता व शिष्टाचार है । फिर तुम जंगली कैसे ?

कृष्ण—स्वार्थ के सन्मुख, पाप के नगर में हमारी सभ्यता—हमारा शिष्टाचार जंगली ही है।

कुम्भ.—बालक ! कहो क्या कहना चाहते हो ?

कृष्ण.—संसार को अभय दान देने वाले—दुष्टों, अत्याचारियों का नाश कर ब्राह्मणों व निर्बलों की रक्षा करने वाले भगवान् रामचन्द्र की तरह क्षत्री वंशोत्पन्न आज विषयासक्त, हिंसक और अत्याचारी कंस के दास हैं, यही देखकर हम ग्रामीण दुखी हैं। ( राजा कुम्भ सिर नीचा कर लेते हैं )

बलराम—जिस क्षत्रि जाति में रामचन्द्र जैसे धर्मात्मा हरिश्चन्द्र जैसे दानी, जनक जैसे योगी हुवे हैं। आज उसी क्षत्री जाति में उत्पन्न हुवे राजपुरुष, पापी दुराचारी कंस के किंकर हैं, दास हैं। राजन् ! तनिक अतीत को विचारिये—क्या क्षत्री का यही धर्म है ? निर्बलों को सताना, पापियों को बढ़ाना। बिचारे किसान अपने रक्त को सुखा २ कर धन कमाते हैं और उसे तुम पानी की तरह वेश्याओं में, मद्य पान में, विषय वासनाओं में बहा देते हो ? कितने दुख की बात है—महाराजा होकर दास ! और दास भी किनके ? अन्याइयों के, अत्याचारियों के, स्वार्थियों के—क्या राजग्रह में जन्म लेने का यही उद्देश है ? राजन् ! क्या आपकी ये सेना अत्याचार को मिटाने जा रही है ? या कंस के प्रतिनिधि महाराजा कुम्भ की अध्यक्षता में गोकुल के किसानों वृन्दावन के ग्वालों की अन्त्येष्टि करेगी ?

कुम्भ—दार्शनिक बालक ! तुम्हारे वचन बड़े प्यारे हैं। परन्तु मैं कंस के आधीन हूं।

कृष्ण –( उपहास्य में ) अहा ! ब्राह्मणों का नाश, क्षत्रियों का वध हो परन्तु कंस की दासता न छूटे ! राजन् ! जाइये, ब्राह्मणों का भले प्रकार वध कीजिये ! छोटे २ नवजात बच्चों को तलवार की घाट उतारिये ! जिससे अन्याय में त्रुटि न रह जाय ! अन्यथा नाश कैसे होगा ! भारतवर्ष ! तू संसार में बहुत ऊंचा चढ़ चुका अब शीघ्र ही गिरने के लिए तैयार हो जा ! (जाना चाहते हैं )

कुम्भः–वीर बालक ! ठहरो ।

कृष्ण –( स्वगत ) अहा ! मन झुका तो सही । भटका बटोही राह पर आया तो सही !

कुम्भः—बालक ! मै यह मानता हूं कि कंस अत्याचारी है । उसकी आधीनता स्वीकार करना घोर पाप है । परन्तु मैं भी तो गिर गया हूं ।

कृष्णः—हाय ! गिर गये हो ! यह गिरना ही तो पतन का कारण है । अपने कर्तव्य छोड़ कर, अपने पथ से बिछड़ कर, इन वेश्याओं, इन कुतियों के पीछे झपट रहे हो-इस लोक व परलोक को नष्ट करने वाली, इस रक्त की नदी मदिरा में तैर रहे हो ! राजन् ! तुम्हारी दीन दुखी प्रजा की आह, इस अन्याय का हाहाकार, तुम्हारे कानों तक बारम्बार आता है । इन चाटुकों की करतल ध्वनि का शब्द ( ताली बजाना ) तुम्हारे कानों तक नहीं पहुंचने देता ।

कुम्भः—हूं ! ( विचारते है )

बलरामः—राजन् ! जब कोई डाकू आपके सम्मुख लाया जाता है तो आप उसे दोषी ठहरा कर सूली पर चढ़ाते हैं ।

आपने कभी ध्यान देकर सुना है कि उस डाकू की आत्मा मरते समय क्या घोषणा करती है ?

कुम्भ·—घोषणा ? वह मरते समय केवल खेद व पश्चात्ताप करती है।

वलराम:—पश्चात्ताप नहीं करती परन्तु आपको चेतावनी देती है। आत्मा से आवाज आती है "हे राजन्! मुझ से अधिक अत्याचारी कस को तू तन मन धन से सहायता देता है। फिर किस अपराध से मुझ निर्दोष को सूली पर चढा रहा है। मै तो किसी धनवान् का ही धन लूटता हू। परन्तु यह कस तो निर्धन किसानों तक का रक्त चूंस लेता है। छोटे २ बच्चों को, जिनपर मुझे क्या, हिंसक पशुओं को भी दया आ जाती हैं, इस ने वध किया है। उसे तू सहायता देता है यह कहां का न्याय है" ?

कुम्भ:—मुझे सब स्वीकार है। परन्तु ये दोष तो तुम मे भी हैं। जिस कृष्ण बालक पर तुम कूद रहे हो वह भी तो लपट, धूर्त है, व्यभिचारी है, चोर है। बतावो वह इन कौन से दुर्गुणों से बचा है ? वीर बालक! क्या उसी कृष्ण के पक्ष का समर्थन मुझ से कराते हो ?

वलराम.( कातरता स ) महाराज सावधान! वृथा कृष्ण की—निष्कलक कृष्ण की निन्दा करना आपको शोभा नही देता। कंस के प्रतिपक्षियों ने ही कृष्ण के मित्रों को फुसलाने के लिए—कृष्ण को बदनाम करने के लिए ही ये दन्त कथायें कठ कर ली है। बालकाल में, चंचलता से—लीला से, कौन बालक अपने हमजोलियों से ठठोलियां नहीं करता। आज उन्हीं लीलाओं, चपलताओं व चतुराइयो से सारे स्त्री पुरुष कृष्ण को प्राणों से प्यारा मान रहे हैं।

कुम्भः—वीर बालक ! यदि मेरे शब्दों से तुम्हारे कोमल हृदय को कष्ट पहुंचा है तो क्षमा करो परन्तु क्या तुम नहीं जानते कि कंस के विरुद्ध होना विद्रोह है, पाप है।

कृष्णः—आप भूल करते हैं—गलती करते हैं। आप क्षत्री हैं, क्षत्री का धर्म है ! अधर्मी, अन्याई का नाश करना चाहे वह राजा हो वा रंक हो। राजन् तनिक अतीत को विचारिये—राम सीता व लक्ष्मण के सहित वनवासी होकर पंचवटी बन में रहते थे। वे रावण के—खर दूषण के राज्य में रहने के कारण उनकी प्रजा थे परन्तु जब राम ने–वनवासी राम ने देखा–खर दूषण के अनुचर अन्याय करते हैं, तभी उन्होंने राक्षसों के नाश की प्रतिज्ञा करली। क्या राम पापी थे ? विद्रोही थे ? राजन् ! इस बात को सत्य, प्रत्यक्ष और ध्रुव मानिये—"धर्मात्मा निर्बल भी पापी बलवान् पर विजयी होता है।"

कुम्भः—वीर बालक ! मैं भी तो धर्म से गिर गया हूं। धर्म से बहुत पतित हो गया हूं।

कृष्णः—राजन् ! हताश न हूजिये। इस विलास को लात मारिये। जीवन को तपस्वी व संयमी बनाइये। इन वासनाओं को त्यागिये (मच के प्याला को ठोकर मार कर चूर २ कर देते हैं) उठिये, कर्तव्य आपको पुकार रहा है। यदि कंस से डरते हो तो राज्य को त्याग कर तपस्वी बनो और इस राज्य को मिटाने के लिए कमण्डुली उठालो। हाय ! कितने दुख की बात है कि आप जैसे क्षत्री वीरों के होते हुए प्रजा पर इतना अत्याचार !

कुम्भः–वीर बालक ! आज से कृष्ण का सिद्धान्त और मेरा सिद्धान्त एक है। आज से कृष्ण की प्रतिज्ञा ही मेरी

प्रतिज्ञा हो गई। कुटिल काल की कुटिल गतियों में पड़ कर समय के कुफेर से, आज इस दुर्दिन में, राजपुत्र देवकी नन्दन कृष्ण कहां है ? जो एक बार उसको हृदय से लगाकर मन का संताप मिटाऊं।

कृष्ण.—देखो! आंख उघार कर देखो! परमेश्वर का प्रतिबिम्ब जिस आत्मा में है—वह सेवक, आपका कोई पुत्र आपके सन्मुख है। ( कृष्ण का अपना वेश बदलना )

कुम्भ.—आओ! दार्शनिक बालक! आवो (हृदय से लगाना)

कुम्भ.—(मुसाहवों से) दूर हटो, चले जाओ, संसार को पाप पथ में ले जाने वाली मदनमंजरी आज से अपना मुंह न दिखाओ।

( दो सहस्र सैनिकों का प्रवेश )

कुम्भ.—(सैनिकों से) तोड दो, ये विषयी सामान तोड़ दो।

( एक सैनिक मद्यादि के पात्र ले जाता है )

कुम्भ.—उठाओ, उठाओ! इन विषयी सामानों को उठाओ। आज मैं धर्म के विरुद्ध आचरण करने वाले अपने सम्राट् कंस को भी बिना प्राण दण्ड दिये न रहूंगा। ( वेश्यादि वाक् शून्य रह जाते हैं )

( दूसरा सैनिक कालीनादि उठाकर ले जाता है )

कुम्भ.—आओ बेटा! आओ! (कुम्भ के साथ कृष्ण बलराम का प्रस्थान )

एक मुसाहवः—अरे इन बालकों ने करा कराया सब चौपट कर दिया।

मदन मंजरीः—यदि मेरा नाम मदनमंजरी है तो मैं इसे सारे देश में धूर्त, पापी व्यभिचारी कह के बदनाम करूंगी। इसने जो जो शब्द मुझे कहे हैं उनका हजार २ बदला लूंगी।

पहला मुसाहबः—जरूर ! जरूर ! बेशक ! बेशक !

( सबै का प्रस्थान )

---

## चौथा दृश्य

स्थानः—जंगल की पगडण्डी * समयः—प्रात.काल

(जोगिया वेश में लक्ष्मी का प्रवेश)

गान

जो प्रण तोर पिया ! सोई हमारो।
नाथ तुम्हारी डगर चलत ही, हुलसत हृदय हमारो।
स्वार्थी लोक, अनर्थ करत हैं, कंपत है दिशि चारो ॥
सुजन दुखी, हैं दुजन सुखी ,अहंकार बनो मत वारो।
देह गेह को, सुध बिसराई; आकर पीत ! निहारो ॥
देश सेवा हित, बनी भिखारिन, हृदय हुवा उजयारो।
सुधासार, शतधा है टपकत; पर दुख को जब टारो ॥
मगन भयो; मनवा तभी मोरा, तन मन धन सब वारो।
आओ पियारे टेरंत चेरी; मिलहु आय, अब प्राण प्यारो ॥
खान पान बिसरो तब सों ही; देश जाति प्रण धारो ॥

लक्ष्मी.—प्यारे अक्षय ! नाथ ! मेरे प्रियतम् ! मेरे यौवन निकुन्ज के पिक ! तुम ने मेरे जीवन को नये रंग में रंग डाला है। मेरे साधारण जीवन को रहस्यमय बना डाला है तुम मेरे गुरु हो , मैं तुम्हारी शिष्या हूं। तुम मेरे स्वामी हो मै तुम्हारी दासी हू। तुम देवता हो मै उपासक हू। तुम ने मुझे देश जाति की सेवा का पाठ पढ़ाया है। दासी आप के कथन को पूरा कर रही है। अत्याचार को दूर करने के लिये दर दर भटक रही है।

सुजला.—( धीरे २ आती हुई ) इस दर दर भटकने से कुछ लाभ भी हुवा ? या यों ही दर दर भटक रही हो ?

लक्ष्मी:—( पीछे को देख कर ) कौन ? बहन सुजला ! आओ।

सुजला—कहो अब तक कौन कार्य्य किया है ?

लक्ष्मी:—तनिक तुम्हीं न बता दो।

सुजला:—मै तो गुप्त रूप में मथुरा गई थी और वहीं पर कंस के महल की दासी कुबरी से मिली। वह बड़ी ही धर्म पक्षपातिनि है। तुरन्त ही उस ने मेरे प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया।

लक्ष्मी:—क्या निश्चय कर आई ?

सुजला:—मैं कई क्षत्राणी कुल बधुवों से जाकर मिली। उन्हों ने मुझे वचन भी दे दिया है कि वे अपने पतियों को को कृष्ण के विरुद्ध शस्त्र उठाने से रोक देंगी।

लक्ष्मी—तुम तो बहुत भारी काम कर आई। कुबरी ने कौन सहायता का वचन दिया है ?

सुजला:—वह स्वयं कृष्ण बलराम का स्वागत कर उन्हें उत्साह दिलायेगी नगर वालों से स्वागत करायेगी जिस से दोनों बालक हतोत्साह होकर हार न जावें।

लक्ष्मी:—हां, अभी उन की आयु ही क्या है। परन्तु नारद जी उन्हीं दोनों से कंस का वध कराना क्यों चाहते हैं?

सुजला:—जिस से सब प्रजा कृष्ण बलराम को अनाथ समझ कर उन पर दया दिखलावे।

( कृष्ण का प्रवेश )

सुजला:—आओ बेटा! तुम्हारा ही तो जिकर हम कर रहीं थीं।

कृष्ण:—मां!

सुजला:—हां बेटा! (कृष्ण सुजला के आंचल में मुख ढक रोते हैं)

सुजला:—हां! रोते हो बेटा! तुम्हे तो कंस का वध करना है। बेटा तुम्हें किस की चिन्ता! औरों की तो एक ही मां होती है परन्तु तेरी सहस्रों मां हैं, कृष्ण! मै तेरी मां हूं, लक्ष्मी तेरी मॉ है यशोदा तेरी मां है। हम सब तेरी मां हैं। सारे भारत वर्ष की स्त्रियां तेरी मां हैं तू हमारा इकलौता लाल है कृष्ण!

कृष्ण:—हॉं मां! माँ! मां तो बन्धन में है!

( पुन रोना )

लक्ष्मी:—बेटा! रोते हो। हाय! क्षत्री वीर होकर रोते हो। चलो लाल! मां को बन्धन से मुक्त करें।

कृष्ण:—माँ! रोता नहीं! चलो मां! मेरे सिर पर आशीर्वाद का हाथ रखदो। मै वसुन्धरा को अन्याइयों के रक्त से रँग दूंगा। ( पैर पृथ्वी पर पटकना )

लक्ष्मी—( कृष्ण के सिर पर दोनों हाथ रख कर स्वगत ) अहा ! परमेश्वर ! यदि मुझे इस जीवन में मां बनने का सौभाग्य प्राप्त हो तो कृष्ण जैसे महान वीर की ही मां बनूं।

सुजला:—हां ! ईश्वर करे ऐसा ही हो। और उस बालक की धात्री का काम मुझे मिले, क्यों लाल ?

कृष्ण—हा, माँ।

लक्ष्मी:—( कृष्ण के हाथ को दिखा कर ) बहन ! देखती हो। यह हाथ मेरे ही महल में जला था। क्यों कृष्ण याद है ?

कृष्ण:—याद है मां ! मैंने गरम घी में हाथ डाल कर पूरी निकाल ली थी।

लक्ष्मी:—( सुजला से ) यशोदा के सहित, ये सब हमारे यहां आये थे तभी की निशानी इन्हें यह मिली थी। ( कृष्ण म ) कुछ और भी याद है ?

कृष्ण:—हां है। परन्तु वह अच्छी बात नहीं। मां ! मैंने दुख से व्याकुल हो कर तुम्हारी कमर पर गरम घी फेक दिया था। मां ! मैं बालक था मेरा अपराध क्षमा करो।

( लक्ष्मी के पैर पकडना )

लक्ष्मी:—( कृष्ण को उठा कर ) ना बेटा ! यह क्या करते हो। तुम्हारा अपराध था ही क्या जो मैं क्षमा करूं ?

सुजला:—हमारा कृष्ण कभी बड़ा ही नटखट था ( कृष्ण का लज्जित होना )

लक्ष्मी:—तभी तो अन्यायियों के रक्त से वसुन्धरा को रंगने के लिए व्याकुल हो रहा है। ( कृष्ण से ) क्यों लाल ?

कृष्णः—हां, चलो मुझे अन्याइयों के रक्त से वसुन्धरा का स्नान कराने दो नहीं तो माता के दुख से मेरे नेत्रों में फिर जल भर आयेगा।

सुजलाः—चलो बेटा ! ( सब का प्रस्थान )

कृष्ण.-(जाते २) चलो मां ! मां ! चलो, माँ बन्धन में है।

---

## पांचवां दृश्य — ( गर्भांक )

स्थानः—मथुरा मे जमना किनारे का उद्यान

समयः—कुछ दिन चढे

वाग मे मेला लगा हुआ है दुकानदार दुकानों पर विक्रय कर रहे हैं, मदन का एक अन्धे कोढी के वेश मे छोटे छोटे ६ लडकों को लिए गाते हुए प्रवेश।

गान

भजले हरि का नाम रे मनवा।
यौवन बीता, आयो बुढ़ापा, तज दे खोटे काम रे मनवा।
चेत अरे मन भूल न जाना, ये जग है रे मुसाफिर खाना॥
तज दे याको ध्यान रे मनवा॥ १॥
कुटुम्ब कबीला महल अटारी, मात पिता सुत प्राण प्यारी।
आवे न कोई काम रे मनवा॥ २॥

भजत जपत सब पाप कटत हैं-हरि दर्शन सों मैल मिटत हैं।
होकर अन्तर्ध्यान रे मनवा ॥ ३ ॥
माया माया में फंस रहा रे, माया को तज दे साथ।
सब कुछ लेकर तू आया था, जायेगा खाली हाथ ॥
रे मनवा भजले हरि का नाम ॥ ४ ॥

मदन:-( एक दूकानदार से ) क्यों भैया ! नन्दी ग्राम को कानसी सड़क जाती है ?

दूकानदार:-क्यों फक्कड़ जी ! वहां क्यों जा रहे हो ?

मदन:—तू फक्कड तेरा बाप फक्कड़ !

दूकानदार:-अरे—तब तू कौन है ?

गहतूमल दूकानदार:-अरे कोई बदमाश होगा ?

मदन —क्या कहा ?

भानामल दूकानदार:-भई ! यह तो अन्धा है।

मदन -अन्धे तुम होगे जी-सूरदास कहते क्या लज्जा लगती है।

भानामल:-अच्छा, आओ भई सूरदास !

मदन:-आयेंगे, आपसे तो कुछ नहीं मांगते, अपना घृताधारे पात्रम् का पाठ याद कर रहे हैं ( स्वगत ) गुरु नारद जी ने कहा "बेटा ! जाओ अरे मथुरा की दशा देख आओ। इस वार तो खूब पेड़ा खाऊंगा। परन्तु देखूँ क्या बड़ा अच्छा नगर है-कंस के शत्रु कितने ? कृष्ण के मित्र कितने ?-परन्तु इससे महात्माओं, साधुओं को क्या ?

" ना काहू से दोस्ती ना काहू से वैर "

परन्तु-आजकल तो तपस्वी भी समाधि से हिलने लगे। काल की गति विलक्षण है ( सोच कर ) अच्छा-वाह रे मेरी तीक्ष्ण बुद्धि-अब आया मस्तिष्क में। इन सब की बातें छिप कर सुनूँ। ( दोनों बालकों को छिपा कर ) यहीं बैठे रहना।

( पुन: आप छिपता है , चार पुरुषों का प्रवेश )

मोटा आदमी:-क्या छोटी उमर कितना बड़ा काम! देखा, मोहनलाल !

मोहनलाल:-हां सेठ जी ! यह उस परमेश्वर की ही अनुपम कृपा है , कोई महान् आत्मा ही इस उमर में ऐसा काम कर सकती है।

वैद्य जी:-निश्चय ! इसमें क्या संदेह है कृष्ण कोई साधारण पुरुष नहीं है। और मैंने जब इस होनहार बालक को देखा था—

सेठ जी:—तो क्या वैद्य जी ! सच ही आपने श्री कृष्ण को देखा है ?

वैद्य जी:-तो क्या मैं झूठ बोलता हूं ? क्या सलोनी सांवली सूरत नाटा कद है।

सेठ जी:-तो आज कोई जलसा है ? चलोगे ? क्यों पांडे जी !

पांडे जी:-ज़रूर ! मैं तो भोजन भी खा आया। चलना है तो शीघ्र चलिये; जगह भी काफ़ी दूर है।

सेठ जी:-तो गोकुल चलें ? आज तो उत्सव गोकुल में मनाया जायगा ?

पांडे जी:-हां ! आज तो उत्सव गोकुल में ही होगा।

परन्तु कल को कृष्ण जी की बरस गांठ का उत्सव नन्दी ग्राम में मनाया जायगा।

वैद्य जी:-कल को तो तमाम मथुरा प्रान्त का उत्सव है ? क्यों पांडे जी !

पांडे जी:-हां ! कृष्ण जी की बरस गांठ पर ही सारे राज्य के प्रतिनिधि आकर परामर्श करेंगे।

सेठ जी:-तब तो परसों या तरसों लौटना होगा ? अच्छा चलो भाई ! ( सब का प्रस्थान )

मदन·-( बाहर आकर ) अब समझे, भई ! अब समझे। गुरु की बातें गुरु ही जाने, या महात्मा श्री मदन जी जानें। हमने कैसा अच्छा अन्धे कोढी का रूप बनाया ! वाहरे मेरी तीक्ष्ण बुद्धि ! ( पुन छिपता है )

पहला दूकानदार:—जब तक जिसका तेज है तब तक ही उसका राज्य है। राज्य से वैर करना जान बूझ कर अग्नि में सिर देना है।

मोटा दूकानदार:-ठीक है। कृष्ण का तो बाप कैद में है। वह वहाँ जंगल में मारा २ फिरता है। बुद्धिमानों का तो काम ही यह होता है कि दूसरों को लड़ाया और अपना काम बनाया।

भित्तरमल·-अपना आराम छोड़ें-हमें लाभ ? जब महाराज कंस सिंहासन पर बैठे थे तो हमारे पुत्र ने ही नगर में उत्सव का सारा प्रबन्ध किया था और सड़कों के सजाने का काम भी लिया था।

रहतुमल·-तभी तो राजघाट का न्यायाधीश कर दिया था। समझे भानामल !

भानामलः—यहीं तक नहीं, अब तो मेरा साला भी सेना में नायक बना दिया गया है।

पहला:—नायक ? मगर वह तो लड़ना भी नहीं जानता।

रहतूमलः—क्यों जी अगर यह राज्य पलट गया तो हमारा रुपया तो बिल्कुल भी न देंगे।

भानामलः—दूर की सोची रहतूमल ! इसमें क्या संदेह है। और भई ! रुपये पैसे का तो नाम ही न लो। भूमि ! भूमि भी हाथ से खिसक जायगी !

पहलाः—नही ऐसा नहीं हो सकता।

मोटाः—बेटा ! अभी पता क्या है। माँ ने सेकी और बेटे

भानामलः—ने खाई हैं—ईश्वर करे यही राज्य रहे।

पहलाः—मगर भाई ! राज पुरुष बड़ा अन्याय करते हैं।

भानामलः—करते हैं ! तुम्हारे यहाँ बड़ा अन्याय किया है। कोई उस ग्वाले का गीत सुन लिया होगा—अन्दर से भी काला बाहर से भी काला, नाम रख दिया कृष्ण घोटाला !

सेठः—मेरा भाई जङ्गलात में बड़ा कर्मचारी है।

पहलाः—इस से क्या ?

सेठः—इस से क्या ! अजी भाई साहब ! जब मैं वहां जाया करता था तो यह कृष्ण एक लंगोटी पहने हमारे यहां छाछ मांगने आया करता था।

भानामलः—और अब बन गये नेता !

रहतूमलः—देश जाति धर्म के नेता ! वही कहावत है-

" कभी न सोई साथरे सपने आई खाट "

पहलाः—ओ हो ! आप तो कवि भी हैं !

रहतूमल.—इस में क्या सन्देह है ! ( खुश होता है )

मानामलः—मूर्खता के सिर खूब सेहरा बंधा !

रहतूमलः – पढ़े न गुणे–दूध पीये कढ़े कढे ।

गाय बैल चुगाय के–भैंस की पकड़ी पूछ ।

बदमाशों का हुल्लड़ करके–खूब कराई पूज ॥ (हसता है)

पहलाः—ऐसा उत्तम छन्द तो बाल्मीक जी की रामायण में नहीं मिल सकता !

सेठः—ज़रा आप के "चुगाय" शब्द पर विचार कीजिये कितना विराट अर्थ है ।

रहतूमलः—नेता जी नेता ! किसन जी नेता !

सेठः—हम तो भई ! बाल बच्चे दार हैं ।

पहलाः–अगर ऐसा अन्याय तुम्हारे साथ भी हो ?

सेठ.–तब देखा जायगा । क्या तुम भी कृष्ण की तरह राजविद्रोही हो ?

पहलाः–नहीं, नहीं, भगवान का नाम लो, कैसा राज-विद्रोह ?

( कुछ ग्रामीण व नागरिक पुरुषों का प्रवेश )

नागरिकः–चलो भाई ! चलो, नन्दी ग्राम को चलो ।

सेठ.–( स्वगत ) ऊं ! कौन झंझट में पड़े !

पहला ग्रामीण:-अरे ! बस, जितने ये सेठ और लाला हैं। बस-ये ही अन्याय की खान हैं। बस, व्याज खाते २ इन की बुद्धि भ्रष्ट हो गई ! बस !

दूसरा ग्रामीण:-बुद्धि? अजी शक्ति बल-असमरती-आतमा भी नष्ट हो गई ! बस ! हे: ( थूकना )

नागरिक:-सब भाइयो ! आओ आज बड़ा उत्सव है। सब नन्दी ग्राम चलें।

भानामल:-उत्सव है ? हूँ—या विप्लव है ?

पहला ग्रामीण:-लाला जी ! अब बहुत पेट बढ़ा लिया है। ब्याज खाना छोड़ दो। एक के पांच बनाना छोड़ दो ( सिर हिलाना )

दूसरा ग्रामीण:-बहुत अन्याय किये हैं-एक के दस किये है।

तीसरा ग्रामीण:-भगवान वह दिन लायगा ! जब इन सूद खोर बनियों का मुलम्मा बनाया जायगा !

पहला ग्रामीण:-सुबह से शाम तक हल चलाते है।

दूसरा:-और रात भर खेत में "लोह लोह" करके गीदड़ों को भगाते हैं।

पहला:-तब शाम को साढ़े ढाई रोटी खाते हैं।

तीसरा:-और ये मसनदों पर रक्खे २ कचौड़ी पूड़ी हलवा गड़प कर जाते हैं। ( मटकता है )

( एक नागरिक पुरुष का प्रवेश )

आगन्तुक नागरिक:-क्यों चौधरी ! चलते क्यों नही ! क्या विचार रहे हो ?

तीसरा ग्रामीण·-अजी क्या विचार रहे हैं ! अपनी और तोप खाने की जन्म पत्री की लग्न मिला रहे हैं !

आगन्तुक नागरिकः-तोप खाना ? यह क्या ?

तीसरा ग्रामीणः-यही ना यही ! बडे पेट मोटे सेठ तोप खाने नहीं हैं तो क्या बारूद घर है ?

भानामल.-सुना ? रहतू मल ! जो हमारे सामने काँपते थे, सरकार २ कहा करते थे । वेही आज हमारा भांडा फाडते हैं ।

दूसरा ग्रामीणः-अभी तो पेट भी फोड़ना है । बोलो श्री कृष्ण चन्द्र की जै । (सब जै बोलते हैं )

रहतूमल -मैं इस बगावत की ख़बर अभी राज दरबार में करता हू । ( सब ग्रामीण व नागरिक लौट आते हैं )

पहला ग्रामीणः-( रहतूमल की गर्दन पकड कर ) यहां ही जो निमट लो-हम तो सब रकम मय ब्याज के बेबाक कर देंगे ।

( मोटा सेठ, व भानामल छुडाते हैं )

गान

भानामलः-हटो छोड़ो मुंह न लगो देहाती ॥

दूसरा ग्रामीण -ब्याज खाय के पेट फुलाया-खूब फुलाई ये छाती ॥

रहतूमलः-हटो छोटो मुंह न लगो देहाती ॥

मोटा सेठ - -राज विद्रोह तुम सब करते हो-हो अपने ही कुल घाती ॥

भानामलः-हटो छोडो मुंह न लगो देहाती ॥

पहला ग्रामीण:—मानो अब भी, पछतावोगे ॥

नागरिक:—शान्ति करो, चलो जलसे में ॥

सब ग्रामीण:—चलो चलो, भाई ! चलो सभी ॥

सब दूकानदार:—हटो छोडो मुंह न लगो देहाती ॥

( सब का प्रस्थान, मदन का बाहर निकलना )

मदन:—चलें—फिर हम भी चलें, गुरु जी को आज की कार्य्यवाही लिखादें !(पुकार कर) अरे नटखट! और सटपट !

( दोनों लडकों का बाहर आना )

दोनों:—हां ! जी हां !

मदन:—चलो चलें ! ( सब का प्रस्थान )

दोनों:—चलो चलें !

---

## छटा दृश्य

स्थान:—रानी सुन्दरा का अन्त:पुर [कमरा]    समय:—रात्रि

( रानी सुन्दरा का प्रवेश )

सुन्दरा:—मेरी सब आशाओं पर पानी फिर गया ! इतने दिनों से आकाश में वायु के घर बना रही थी ! इतने दिनों की आशा, सब वृथा गई ! मेरी आशाओं के आधार अक्षय ! तुमने मेरे भविष्य को ही पलट दिया। बेटी लक्ष्मी ! प्राणों से प्यारी लक्ष्मी ! तुझे मैंने फूलों से चुन २ कर पाला था। तेरे मार्ग में आंखें बिछाई थी। तेरे तनिक से दुख से महल व्याकुल हो जाता था। नन्हे २ पौदों की पत्तियां मुरझा जाती थीं। जिसने कभी पलंग से पैर नहीं उतारा, आज

हाय लक्ष्मी ! तू कैसे ग्राम २ फिरती होगी ? अक्षय मेरे नैनों के तारे अक्षय ! इस राजप्रासाद को छोड दर २ फिरने की तुम्हारी क्यों इच्छा हुई ? मेरे घर आते, यह धन, यह महल, यह राज्य सब तुम्हारा ही तो है। जो कुछ मेरी लक्ष्मी का है सो तुम्हारा है। बेटा ! मैं भी तो तुम्हारी माता के समान हू। तुम दोनों मेरे प्राण हो, मेरी दो आंखे हो, जिन आंखों का इतना सन्मान, हाय ! आज उन्हें मिट्टी में रुदता देख लूं ? तुम्हारे हाथ में लक्ष्मी का हाथ पकडाया था। क्या इसी दुख को देखने के लिए यह उत्सव रचाया था ? हाय ! मेरे कैसे अच्छे दिन निकल गये ! मेरे अक्षय ! मेरी लक्ष्मी ! मुझ दुखिया को और न सताओ !

( मूर्छित हो गिरना )

( राजा सूरसेन का प्रवेश )

सूरसेन·—यह ससार क्या है ? मनुष्य को इस ससार ने कैसा जाल में फंसा रक्खा है ! हाय रे ! अधम ससार !

सुन्दरा·—( उठकर ) कौन ? तुम कौन हो ? (व्यग मे) अब तो हो गये झूठे ! राज दरबार में, महलों में मेरे सामने, मित्रों में सोते उठते यही गीत, यही राग " हमारा अक्षय बडा सभ्य, सुशील धर्मात्मा है, सदाचारी महात्मा है, मनुष्य नहीं देवता है। परन्तु अब वह बात हवा हुई। ( पागलों की तरह ) देखते नहीं ! यही तुम्हारा अक्षय है। चांडाल निठुर अक्षय है ! मेरी लक्ष्मी का गला दबा रहा है। तुम उसे छुडाते भी नही। पुत्री को बचाते भी नहीं। अरे निठुर हत्यारे ! छोड दे मेरी लक्ष्मी को। ( पागलों की तरह झपटती है )

सूरसेनः—( पकड कर ) प्रिये ! होश में आओ। अपने को सभालो। कहां है अक्षय ? देखती नहीं हो !

रानीः—( व्यग से ) आंखें खोलो—देखते नहीं। लो यह

मार डाली। मेरे घर का दीपक बुझा दिया! मेरी लक्ष्मी सदा के लिए समाप्त करदी! अक्षय! तुम तो बड़े दयालु थे आज वह दया कहाँ गई? (राजा से) नाथ! पुत्री तो सदा के लिए सो गई। अब मेरी भी इच्छा एक लंबी नींद लेने की है।

सूरसेन.—प्रिये! हमारी लक्ष्मी तो आनन्द में है।

सुन्दरा:—मैं तो पहले से ही जानती थी कि तुम बडे स्वार्थी हो अच्छा जो हो-निठुर अक्षर! तू ने ही यह अमृत में विष घोला है।

सूरसेन:—प्रिये! क्या अक्षय निठुर है?

सुन्दरा:—(क्रोध में) खबरदार! जो तुमने मेरे अक्षय को कुछ कहा। मैं अपने अक्षय को चाहे निठुर कहूं चाहे हत्यारा कहूं। तुम उसे कुछ नहीं कह सकते-दामाद पर जितना अधिकार सास का है-ससुर का नहीं। (दासी का प्रवेश)

दासी:-महारानी! भोजन तैयार है।

सुन्दरा:-निगोडी जायगी नहीं! मेरे अक्षय लक्ष्मी तो घर २ भीख मांगते होंगे। जाने आज कुछ खाया भी होगा या नहीं-और हमारे यहां दूसरा भोजन भी तैयार हो चुका। हाय! मेरे अक्षय को जब कोई भीख न देकर झिडक देता होगा। हाय! वे कैसे सहन करते होंगे! (पागलों की तरह सूरसेन से) तो तुम सच कहते हो कि अक्षय और लक्ष्मी आज हमारे यहां भीख लेने आवेंगे। तुम तो भाट हो-तभी सब खबर रखते हो? तुमने मेरे अक्षय को कहाँ देखा था?

(पुकार कर) चम्पा! चम्पा! (चम्पा दासी का प्रवेश) (दासी से) जाओ। महलों को सजाओ। हमारे यहाँ देवता आयेंगे-अतिथि आयेंगे। (दासी का प्रस्थान)

सूरसेन.–प्रिये !

सुन्दरा.–भाट जी ! मैंने पहले ही कहा था–

" होयहि वही जो विधि रच राखा "

देखो कैसे अच्छे घर का लड़का । मेरे अश्व का कोई अपराध नहीं–लक्ष्मी के बुरे भाग्य से ही अश्व को ये दिन देखने पड़े ।

( नैपथ्य मे लक्ष्मी का गाना )

गान

काली कोयल का सदा, बाटिका से प्यार हो ।
भ्रमर का जीवन सदैव, पुष्प पर ही निसार हो ॥
पत्नि का जीवन कुसुम, फूले पति आधार पर ।
शीत जल नदियों का जैसे, मीन जीवन धार हो ॥

सुन्दरा–( सकुचाकर ) नाथ ! मैंने अब तक आपको भाट ही समझा ! ( नेपथ्य में पुन गान )

काली कोयल का सदा, बाटिका से प्यार हो ।
भ्रमर का जीवन सदैव, पुष्प पर ही निसार हो ॥

सुन्दरा–चम्पा ! ( चम्पा का प्रवेश )

सुन्दरा.–चम्पा ! जाओ, महल को सजाओ । दीपक जलाओ । आज वनवासी राम सीता अयोध्या को न जाकर जनकपुरी को ही आ रहे हैं ।

( नैपथ्य में पुनः गान )

गृहस्थ रूपी रथ चले, धर्म पथ पर ही सदा ।
प्रेम की धुरियों का बिल्कुल, एक ही बस तार हो ॥

( सुन्दरा दीवार के सहारे सिर टेक कर खड़ी होती है )

( लक्ष्मी का गाते हुवे प्रवेश )

देश जाति की लगे, गाठ पच कर प्रेम में ।
खोलना उस गाठ का, संसार को दुश्वार हो ॥

लक्ष्मी.-( चारों ओर देख कर ) हाय ! मैं माता को कैसे समझाऊंगी ? मैया को कैसे धीर बंधाऊंगी। (पुकार कर) माता!

सुन्दरा:-( पागलों की तरह ) भिखारिन ! जाओ, कहीं और मांग खाओ ।

लक्ष्मी.-मां ! मैं तो तुम्हारी पुत्री हूं । ( दरन हुना )

सुन्दरा.-( उपहास से ) अरी पगली ! जब तक हम राम सीता का पूजन न करलें कैसे भिखारी को भोजन खिला सकते हैं ।

सूरसेन:-बेटी ! हाय मैं तुझे पहचान भी न सका ।

सुन्दरा:-कौन लक्ष्मी ? प्राणों से प्यारी लक्ष्मी आओ ।

( हृदय से लगाना )

सुन्दरा:-लक्ष्मी ! तेरा यह वेश ?

लक्ष्मी.-पती की आज्ञा ने जाति की पुकार ने और इस राज्य के अन्याय ने, मुझे इस रंग में रंग दिया है । माँ ! कंकड़ों में चलना इन श्वेत पत्थरों के घरों से बढ़ कर है । पृथ्वी पर सोना, मखमल की सेज से बढ़ कर है। सूखे चने चबाना, मुझे अच्छा लगता है, मां !

सुन्दरा:-बेटी ! तैंने कभी सोचा है कि मैंने तुझे किन दुखों से पाला था । तू अभी माता पिता के प्रेम को-माता के हृदय को क्या जाने । बता अक्षय अभी तक कहां है ।

लक्ष्मी -मां ! वे युद्ध में गये हैं।

सुन्दरा.-युद्ध में ? ( सूरसेन म ) नाथ ! क्या मैं इस युगल जोडी को एक साथ न देख सकूगी ? ( दासी का प्रवेश )

दासी -महाराज ! अक्षय आये हैं।

सुन्दरा:-अहा ! आ गये मेरे राम-आओ ( प्रस्थान )

सूरसेन·-यह जीवन भी स्वप्न सा है। हमारे जीवन समुद्र में लहरे उठती हैं और फिर वैठ जाती हैं । ससार में एक सुख और दस दुख हैं । नहीं मालूम फिर क्यों मनुष्य, एक सुख के लिए दस दुखों को भूल जाता है।

( रानी का अक्षय के सहित प्रवेश )

रानी:-अक्षय ! बताओ कि हम दोनों का ससार में सुख और दुख क्या है ?

अक्षय:-लक्ष्मी का और मेरा सुख तुम्हारा सुख, हमारा दुख तुम्हारा दुख है।

रानी:-तो अक्षय ! जब यह धन, धान्य सब तुम्हारा है, तो फिर क्यों तुम देश त्यागी हुए ? बेटा ! तुम दोनों को छोड हमारा इस ससार में क्या है !

अक्षय -यह पूछती हो। माता ! जहां जाति पर-

रानी -सब जानती हू ! परन्तु अक्षय ! लक्ष्मी को छोड मेरा इस संसार में क्या है । लक्ष्मी का सुख तुम्हारे सुख में और उसका दुख तुम्हारे दुख में है।

अक्षय —इस जीवन का भरोसा ही क्या ?

रानी:—अक्षय ! अक्षय ! तो क्या मैं तुम्हें अपनी आखों देखती जलती आग में कूद जाने दूं ? हाय ! क्या तुम्हारे इसी वेश के लिए मैंने ये मनसूबे बांधे थे ।

अक्षय:—माता ! तुम्हारा अक्षय और लक्ष्मी दोनों धर्म पर हैं । और वे धर्म पर ही प्राण देंगे ।

रानी:—मैं तुम्हें देखते ऐसा न करने दूंगी । मैं जानती हूं तुम धर्म पर हो परन्तु मैं तुम्हें पाप में नहीं ले जाती । मैं तुम्हें न जाने दूंगी ( क्रोध में ) निठुर ! निर्दयी ! क्या मैं अपनी आंखों देखते यह वस्त्र पहनने दूंगी ? ( अक्षय के कपड़े फाड़ती है )

अक्षय:—( स्वगत ) शोक से व्याकुल हैं, इन्हें समझाना सहल नहीं, अब कलेवर बदलना चाहिये ( प्रगट ) माता! क्षमा करो, मेरे अपराध को क्षमा करो ।

लक्ष्मी:—हा ! हा ! क्या माता के आंसुओं से पिघल गये ? अपनी प्रतिज्ञा को भूल गये ? क्या सारे परिश्रम को धूल में मिला दोगे ?

रानी:—तुमने कोई अपराध नहीं किया । अक्षय ! मैं हीं अपराधिनी हूं ।

अक्षय:—मैं आपकी आज्ञा मानने को तैयार हूं । यदि आप भी मेरी दो बातों को पूरा करें ।

रानी:—तुम्हारी बात मानूंगी ? अक्षय !

अक्षय:—तो प्रतिज्ञा करती हो ? मां !

रानी:—( हंस कर ) प्रतिज्ञा ? तो क्या तुम्हें मेरा विश्वास नहीं ? अच्छा हमारा विश्वास कौन करता है । मेरी प्रतिज्ञा है अक्षय !

अक्षय:—मुझे और लक्ष्मी को धर्म के लिये बलिदान कीजिये। और इसी समय इसी वेश में विदाई दीजिये।

रानी—हाय! हाय! ( मूर्छित होना, अक्षय का होश में लाना )

रानी—( होश में आकर ) अक्षय! अक्षय! निठुर अक्षय! क्या मुझ पर इतना ही प्रेम है? इतनी ही दया है?

अक्षय—मां! यदि तुम चाहती हो कि हम सुखी रहें तो हमें इसी वेश में विदा दो मां!

शूरसेन—अक्षय! हम पर दया करो! तुम को छोड़ हमारा क्या शेष है?

अक्षय:—राजन्!

रानी:—नाथ! अब अक्षय का तन मन प्राण जाति की सेवा पर लगा है। उसे उस ओर से न हटाओ। अक्षय! जाओ, प्राणों से प्यारी लक्ष्मी! जाओ, पति की सेवा, पति की आज्ञा एक अराधना, वही साधना तेरा लक्ष्य हो। बेटी! जाओ जहां रहो, सुखी रहो तुम्हें विदा! लक्ष्मी! अक्षय! तुम्हें विदा! ( सिर पर हाथ रख कर ) तुम चिरंजीव हो—यही आशीर्वाद है अक्षय! आशा तो नहीं यदि जीवित रही तो फिर भेंट करूंगी ( गला रुक जाता है ) विजयी होकर यहीं आना अक्षय! जाओ लक्ष्मी! जाओ अक्षय!

[ अक्षय और लक्ष्मी का प्रस्थान ]

रानी—हाय! हाय! यह मैंने क्या किया! गये अक्षय निर्दयी निठुर अक्षय! गये ( दासी से ) निगोड़ी! फिर बुला-कर ला! फिर जी भर कर देखलूं। फिर इस जीवन में न देख सकूँगी। ( दासी का प्रस्थान )

राजाः—हे ईश्वर ! यह क्या गति है ? पापी अत्याचारी संसार में क्यों दीन दुखियों को सताते हैं ? अक्षय ! मै भी इस राज्य को नष्ट करने में ईंधन का काम दूंगा ( प्रस्थान )

रानीः—विवाह में दोनों को स्नान कराकर, सुन्दर २ वस्त्रों व अलंकारों से सजा कर, भोजन कराया था। अहा ! वह समय कैसा सुहावना था।

[ राजा; अक्षय, लक्ष्मी व दासी का प्रवेश ]

रानीः—आओ अक्षय ! आओ लक्ष्मी ! जिस उत्साह के साथ विवाह में तुम्हारा स्वागत किया था। वैसा ही स्वागत फिर किया चाहती हूं। अक्षय ! तुम हमारे पूज्य हो, हृदय के दीपक हो।

अक्षयः—माता ! हमें स्वीकार है।

रानीः—मेरा अक्षय बड़ा दयालु है। आओ लक्ष्मी पहले तुम्हें ही शृङ्गार कराऊं ( रानी का लक्ष्मी व दासी के साथ प्रस्थान )

राजाः—यह संसार बड़ा छलिया है, क्यों ? अक्षय !

अक्षय—छलिया ?

राजाः—हां छलिया ! मनुष्य कहीं विचार करके चिन्ता करके अमर न हो जायें। इसीलिए संसार उसके मन को तरह २ की और २ चिंताओं में फंसाये रहता है। (दासी का प्रवेश)

दासीः—आप भीतर चलें।

राजाः हम दोनों ?

दासीः जी हाँ। ( दोनों का प्रस्थान )

{ दूसरी ओर से कई सहेलियो के सहित लक्ष्मी का शृंगार किये हुये प्रवेश }

[ अक्षय का सुन्दर कपडे पहने रानी व राजा के सहित प्रवेश ]

**रानी.--कैसा अच्छा शुभ अवसर है।** (दोनों के गले में माला डालना )

( सब गाती हैं )

गान

**रानीः**--हे हरि ! भवर सों नैया पार करो।

**सखियें** --गहरी नदिया नाव पुरानी; चलत पवन के झोर।

कुछ डूबी डूबन चहत, हो रहो चहु दिशि-शोर ॥१॥

**रानीः**--नौका मेरी भवर में, कर्णधार दो प्राण ।

आशा के आधार है, अक्षय लक्ष्मी प्राण ॥ २ ॥

**लक्ष्मीः**--प्रण रोपो हमने यही, होवे देश सुधार ।

आय मिले पितु मात से, कंस को हो संहार ॥ ३॥

**सखियेः**--हे हरि ! भवर सों नैया पार करो।

**एक सखीः**--शुभ अवसर मे हसहु अब, रानी असुवन दूर करो।

**रानी**--यह हसी विलाप रहे आनन्द से भरपूर करो।

**सखियें**--हे हरि भंवर सों नैया पार करो ॥

# सातवां दृश्य

**स्थानः**—नन्दी ग्राम के बाहर का मार्ग । **समयः**—सन्ध्या

(स्त्री पुरुष बैठे हुए उत्सव मना रहे हैं, कुछ स्त्री पुरुष
खड़े प्रार्थना कर रहे हैं)

गान

इस यज्ञ में हमारे ; होवे सफलता भगवन् ।
अन्याय का जलादें, हम मिलके घर ये भगवन् ॥
भूले थे नाद करना, मीठा सुरीला अपना ।
स्वतन्त्रता की तन्त्री, फिर से बजादे भगवन् ॥
चहुं ओर अब है छाई , अन्याय की घटायें ।
हम ज्ञान भानु से अब , इन को मिटादे भगवन् ॥
न्याय की पवन के झोके , चले हृदयों में ।
मृदु प्रेम धारा जग मे फिर से बहादे भगवन् ॥
निज कर्म योग शिक्षा , के दीप को जगा कर ।
बलिदान, आत्म गौरव, सब को दिखादे भगवन् ॥

**देवदत्तः**—( खड़े होकर ) देवियों! तथा भद्र पुरुषों ?
हमें अपने काम में पूरी सफलता प्राप्त हो रही है । अब कंस का अन्त निकट है । सेवक लोग राजपुरुषों से नाता तोड रहें हैं, कृष्ण की आज्ञा है, बलराम का आदेश है, कि कोई मनुष्य कंस की सहायता न करे । वे स्वयं कंस का विध्वंस

कर लेंगे। भाइयों! आज तुम्हारी परीक्षा का समय है देखना कहीं चूक न जाना। अपने स्थान से पीछे न हटना। शस्त्रों का प्रहार होगा। अग्नि की वर्षा होगी, किन्तु तुम पीछे न हटना। कष्ट को देख कर अपने विचारों से बदल न जाना। हंसते २ प्रेम से, शान्ति से, आत्म सयम से इस जोहार व्रत में प्राण दे देना। अब कृष्ण बलराम शीघ्र ही इस कुल कलंक का वध करने वाले हैं। महाराज वसुदेव राजरानी देवकी वन्दीग्रह में हैं। कृष्ण बलराम जगल में मारे मारे फिरते हैं। राजवधु सुजला इस दशा को प्राप्त हुई है यह अवस्था और साधु वेश! जो महलों में रहती थी वही राजवधू सुजला आज दर दर भटक रही है।

सुजला—देवदत्त! उत्तेजित न हूजिये। इस भाव को भूल जाइये कि मैं स्वामी हूं तुम सेवक, मैं रानी हूं तुम प्रजा। केवल यही ध्यान रहे मैं तुम्हारी भगिनी हू। मैं विधवा हू, सन्यासिनी हू। भिखारिनी हूं। तुम्हारे ही अन्न जल से यह नश्वर देह इस ससार समुद्र में बह रही है। ईश्वर से यही विनय है कि अन्याचार का अन्त हो जाय।

( तीन चार पुरुषों का साधारण वेश में प्रवेश )

सुजला—आओ भाई! तुम कौन ग्राम वासी हो?

१ग्रामीण:—मां! हम गोकुल ग्राम वासी है।

२ग्रामीण:—परन्तु मा! कस के कई योद्धा व सैनिक भी हमारे पीछे ही पीछे यहां तक आये हैं।

सुजला—आने दो, हमारी रक्षा परमेश्वर के आधीन है।

( एक ग्रामीण के तीर का लगना )

ग्रामीण:—हा मृत्यु ! ( गिरना )

सब:—यह क्या ? अत्याचार ! ( कोलाहल का होना )

(तृणवर्त, शंखचूड़ का सैनिकों सहित प्रवेश)

तृणावर्त:—राज विद्रोहियो तुम चारों ओर विद्रोह कर रहे हो या तो अपने इस काम से हाथ हटाओ, अथवा मरने के लिये तैयार हो जाओ। ( भाले से दो पुरुषों का वध करता है )

(कुछ मनुष्य प्राण लेकर भागते हैं वेणुनाथ, अक्षय, सूरसेन कुछ राक्षसो के साथ लडते है और दूसरी ओर को चले जाते हैं। नैपथ्य में कोलाहल ) ।

देवदत्त:—सावधान ! जो निहत्थों पर शस्त्र उठाया ।

शंखचूड़:—( सैनिकों से )कुछ सैनिक वहाँ जाकर वेणुनाथ और अक्षय का वध करो ( कुछ सैनिकों का प्रस्थान )

तृणावर्त:—सब पीछे हट जाओ ।

देवदत्त:—अरे दुष्ट ! चांडाल पिशाच ?

( शंखचूड़ का देवदत्त के भाला मारना देवदत्त का आहत हो गिरना है )।

देवदत्त:—हा ! हा कंस ? अत्याचारी कंस ! ( मृत्यु )

[ शंखचूड व तृणवर्त स्त्री पुरुष व बालकों का वध करते हैं ]

( सर्वत्र हा हा कार )

सुजला:—दीन दुखियों पर शस्त्र चलाने वाले दुष्टो !

शंखचूड़:--वीरो ! सुजला को कैद करो।

सुजला:--हां तुम कैद करो। मै देखूँ तो सही हत्यारे चांडाल दुष्ट !

{ एक सैनिक की तलवार छीन, दो सैनिकों का वध कर शंखचूड़ पर तलवार चला देती है। पीछे जाकर तृणवर्त तेजी से भाला मार देता है }

सुजला:-( गिर कर ) हाय ! हा ! दुष्ट नीच कुलांगार !

(सैनिक जनता पर शस्त्र चलाते है सहसा कृष्ण बलराम का प्रवेश)

कृष्ण:--सावधान ! हत्यारो सावधान !

{ युद्ध होता है कृष्ण बलराम उन सब का वध करते है नैपथ्य मे हाहाकार, जनता उठ कर धीरे २ भाग जाती है। }

बलराम -( तृणवर्त से ) दुष्ट ! आओ, युद्ध करो, अपनी वीरता का परिचय दो, बालकों की हत्या, अबलाओं का वध करके ही आज तक वीरता की पदवी पाते रहे हो। आज तुम्हारी वीरता की परीक्षा का दिन है युद्ध करो पिशाच !

( दोनों अपने शस्त्र ठीक करते हैं )

बलराम —हैं ! क्या कोई भी पिशाच शेष नहीं ? इतना शीघ्र कार्य समाप्त हो गया ! क्या हमने युद्ध नहीं किया ? युद्ध करो ! कुलांगार ! युद्ध करो।

कृष्ण:—शान्त हो ओ भाई ! आज हमारे यज्ञ का यह पहला दिन है।

बलराम:—हां और सफलता भी हुई।

कृष्ण:—भगवान की दया से ऐसी ही सफलता होगी। अब की वार इस यज्ञ में कंस का बलिदान होगा।

बलराम:—कैसा अत्याचार है कृष्ण!

कृष्ण:—कैसी ज्योति है बलराम!

बलराम:—कहां?

कृष्ण:—परमात्मा की अनुपम सृष्टि में, विकट आर्त्त नाद की इस भूमि में, हत्या के इस लीला क्षेत्र में, इस नन्दी ग्राम मे, इस नक्षत्र परिपूर्ण रजनि में! अहा! ये कैसी ज्योति है, ये कैसी मूर्ति है बलराम! यह दृश्य, यह दु:खद सौन्दर्य, यह विस्मय भगवान! बड़ा ही अपूर्व है। बड़ा ही मनोहर है! दयानिधे! अहा! (हाथ जोड़ कर आकाश को देखते हैं) अहा! (रुके हुए कण्ठ से) माँ! पिता! तुम्हें इतना कष्ट! भाई बलराम! क्या सोच रहे हो?

बलराम:—कुछ नहीं कृष्ण! (आंसु पोंछते हैं)

कृष्ण:—भाई! बलराम! (हाथ पकड़ लेते हैं)

बलराम:—कृष्ण! कृष्ण! भइया!

कृष्ण:—शंखचूड़! आओ युद्ध करो! आज तुम्हारे पिशाच कर्म का अन्तिम अभिनय हो चुका। युद्ध करो कुलांगार! आओ नरक लोक में तुम्हारे लिये स्थान खाली है। जाओ, अपने स्थान पर अधिकार करो।

शंखचूड़:—ढीठ बालक! आज तेरे रक्त को लेकर ही दरबार में सन्मान का भाजन बनूँगा।

कृष्ण.—(मुसकरा कर) क्यों नहीं। अच्छे कर्मों का पुरस्कार तो पाओगे ही। परन्तु नरक के सिंहासन पर कौन अधिकार करेगा। अच्छा युद्ध करो शंखचूड़ ! ( युद्ध करते हैं शंखचूड़ कृष्ण की तलवार से आहत हो एक पैर झुका देता है )

बलराम· प्रहार करो कृष्ण ! यही समय है, मारो हत्यारे को !

( कृष्ण, शंखचूड का बध करते हैं )

बलराम –( तृणवर्त से ) तुम्हारा मित्र तो गया। आप भी चलिए कहीं नरक में जाकर आधे से अधिक का अधिकारी न बन बैठे। लो युद्ध करो। ( दोनों युद्ध करते हैं )

बलराम· ( गर्ज कर ) सावधान ! देख यह तेरी मृत्यु है, जा शीघ्र जा, अपने मित्र से आधा भाग बांट ले।

( बलराम तृणवर्त को शस्त्र प्रहार से मार देते है )

बलराम.–हो गया ! समाप्त ! आओ पापियो युद्ध करो ! युद्ध !

कृष्ण·।( मुसकरा कर ) शान्त होओ भाई ! अब युद्ध किससे करोगे? यहां तो अब श्मशान ही श्मशान शेष है। (भाओ.गले लगें)

# तीसरा अंक

## पहला दृश्य

स्थान—नन्दी ग्राम के बाहर का हत्या-स्थल ।

समय—अन्धकार मय रात्रि ।

( स्थान २ पर मुरदों के ढेर । घायल स्त्रियें व बच्चे कराह रहे हैं )

सुजला: ( पृथ्वी पर पटी हुई कराहा कर ) हाय लाल ? पुत्र ? मरती बार तुम्हें और देख लेती । प्राणनाथ ! वहां आकाश में क्यों हंस रहे हो ? अच्छा हंसो । शायद इस लिए हंस रहे हो कि मैं तुम्हारी मृत्यु का बदला न ले सकी । आ सुमन्त ! ला ! आ तुझे भी ...... ( मूर्छा )

[ लक्ष्मी का सुमन्त के साथ गाते हुवे प्रवेश ]

गान

हाय ! ये कैसी विपद दई !

सुख का सपना मिटो अचानक, सुख की नींद गई

टूट गये हैं तार हृदय की, वीणा के सबई !

या मसान में भग्न हृदयों सों, गावे कहा दई !

लक्ष्मी:-ओह ! चारों ओर कितनी हत्या हुई है ! ये रोना, ये चिल्लाना, हे परमेश्वर ! ये मुर्दों के ढेर देखे नहीं जाते । ये घायलों की चिल्लाहट सुनी नहीं जाती । अत्याचारी कंस ! दुष्ट ! नराधम !

एक स्त्री-हाय रे ! पानी ।

लक्ष्मी-( पास जाकर ) -लो बहिन ! पानी लो ( पानी देती है )

सुमन्त-मेरी मां यहां नहीं है ? (लक्ष्मी का हाथ पकड लेता है)

सुजला:-आ गये बेटा ! आओ !

लक्ष्मी —राजवधु सुजला !

सुजला —बहिन ! ऐसे न कहो । मैं राजवधु नहीं । मैं विधवा हू भिखारिन हू । धन्य तुम हो जो अपने पति के साथ तपस्या कर रही हो । बहिन इस तीर को मेरे हृदय से निकालो ।

( लक्ष्मी तीर निकालती है , रक्त का प्रवाह , सुजला की मूर्छा)

लक्ष्मी:—बहिन ! सुजला ! ( पानी से मुह धोती है )

सुमन्त —मां ! माँ बोलती क्यों नहीं ?

सुजला.—पुत्र ! सर्वस्व ! ( गहुक का पागल की तरह प्रवेश )

गहुक.—मैंने एक नवीन—अति नवीन दृश्य देखा । अलौकिक दृश्यों का तार बध गया ! मेरे जमाई का वध जिसने किया—मेरे मित्र वसुदेव को जिसने बन्दी बनाया । मैं उसी के सामने सिर झुकाता हू । उस की जूठन का भोग लगाता हू । मै राज भोग खाकर मस्त हूं । मेरी आंखों में जल भर आया । लज्जा से मेरा शिर झुक गया । तभी मै इस दासत्व की निद्रा को त्याग, खुले मैदान में निकल आया । पहले मै स्वार्थ के राज्य में था परन्तु अब परमार्थ के राज्य की प्रजा हू ।

सुजला:-पिता जी ! तुम्हें भी देख लिया । और वह भी अपनी गौरवता में । यह मुहूर्त भी कैसा शुभ है ! पिता जी ! अब मुझे विदा दो ·· ( मृत्यु )

राहुक:—विदा ! सुजला ! सदा को विदा ! पुत्री ! आओ अपने पति से जा मिलो । हाय ! एक एक करके इस स्वर्ग

सदन के सब पुष्प गिर गये और जो शेष हैं वे भी गिर जायगे। परन्तु मैं अभागा!

( सिर पकड़ कर बैठ जाते हैं )

सुमन्तः—मां! मां! पानी तो पीले ( पानी लेकर जाता है )

राहुकः-हाय बेटा!

लक्ष्मीः—राजन्! शोक को छोड़िये।

राहुकः-लक्ष्मी! मुझ पापी से न बोलो। जाओ-पुत्री सुजला! तुम स्वर्ग गई। अच्छा किया जो स्वर्ग चली गई। मैं भी आता हूं। स्वर्ग में तो न जा सकूंगा। परन्तु नर्क में जरूर जाऊंगा! चलो नर्क ही सही। इस पृथ्वी पर रहने की मेरी तनिक भी इच्छा नहीं। ( प्रस्थान, सर्वत्र भयङ्कर तूफान होता है )

एक बालकः-हाय! हाय! ( लक्ष्मी बालक को उठाती है )

लक्ष्मीः-हाय दुष्टों ने इस निर्दोष बालक का भी हाथ काट डाला।

नेपथ्य मेंः-काट डाला। ( वेग में राहुक का प्रवेश )

राहुकः-अरे कंस! इस निर्दोष बच्चे ने क्या अपराध किया था जो तूने इसे मारा? नहीं २ तूने बहुत ही उचित किया है। तूने तो बालकों के वध से ही यह कार्य्य आरम्भ किया है। तूने तो इस अत्याचार के भयङ्कर भवन की नींव में निर्दोष बच्चों के शव रक्खे हैं। अच्छा ठहर नीच कुलांगार! नराधम! ( वेग में प्रस्थान )

सुमन्तः-नाना जी! ( पीछे भागता है )

लक्ष्मीः-( पकड़कर ) बेटा! मेरे पास आओ!

सुमन्त:-अच्छा मेरी मां कब आयेगी ? ओ थोड़ा सा पानी और पिला दूं तो आ जायेगी ? ( लक्ष्मी रोती है )

सुमन्त—तुम रोती क्यों हो ? क्या मां न आयेगी ? नहीं आयेगी मत आओ । तुम रोओ मत, लो मैं इन्हें पानी पिलाता हूं । तब तो मेरी मां आ जायेगी ?

लक्ष्मी -ईश्वर देखना । आकाश के तारो ! खूब हंसो । खिलखिला कर हसो फिर ऐसा आनन्द न मिलेगा ! आओ सुमन्त ! मेरी गोद में, आओ । ( सुमन्त लक्ष्मी के पास आता है )

[ अचानक उस के हृदय में तीर लगता है ]

सुमन्त —( गिर कर ) हाय ! हाय ! ( छटपटा कर मृत्यु )

लक्ष्मी —( रो कर ) हत्यारो ! यह क्या किया ?

( सैनिकों का प्रवेश )

एक सैनिक:-मारो ! इसे भी मारो ।

नेपथ्य में—सावधान ! ( एक सैनिक के तीर लगना, गिरना )

( राहुक का प्रवेश )

राहुक:-कुलांगारो ! दुष्टो ! युद्ध करो ( युद्ध करते हैं तथा आहत हो गिर जाते हैं )

राहुक:—हाय परमेश्वर ! ( मृत्यु )

लक्ष्मी—( तलवार उठाकर ) आओ दुष्टों ! मेरे साथ युद्ध करो ! आज तुम्हारी जय पराजय दोनों में ही अपकीर्ति है । आओ मुझ अबला से युद्ध करो ।

( लक्ष्मी सैनिकों से युद्ध करती है )

( चोट लगने से लक्ष्मी के हाथ से तलवार गिर जाती है )

लक्ष्मी:—( हंस कर ) धन्य हो वीर ! तुम धन्य हो ! स्त्री

से युद्ध करते प्रथम तो तुम्हें लज्जा ही नहीं आती। दूसरे एक स्त्री पर कई पुरुषों का आक्रमण ! तुम विजेता हो, तुम धन्य हो महापुरुषो ! धिक्कार !

एक सैनिकः—रक्षा करो नारी ! अपनी रक्षा करो।

लक्ष्मीः—तुम हमारा रक्त चाहते हो ! ( छाती को नामने कर के ) प्रहार करो दुष्टों ! प्रहार करो। यही अबला की रक्षा है, यही नारी का गौरव है। ( सैनिक का लक्ष्मी का प्रहार करना )

लक्ष्मीः—( गिर कर ) आह ! ठीक किया ! अपनी नीच प्रकृति को न छोड़ा ! क्रूर वृत्ति न त्यागी।

नैपथ्य में-इधर ही।

सैनिकः—भागो, भागो ( भागते हैं )

( दूसरी ओर से अक्ष्य का प्रवेश )

अक्ष्यः—(चारों ओर देखकर) ओह ! ये भीषण हत्या-कांड ! वृद्ध महाराज राहुक !—अरे दुष्ट कंस ! राज वधु सुजला ओह ! मेरा सिर घूम रहा है। पृथ्वी पैरों के नीचे से निकली आ रही है। हाय ! ये अबोध बालक ! राज कुमार सुमन्त इस को भी मार डाला। ( सिर पकड़ कर बैठ जाते हैं )

लक्ष्मीः—आये, चकोरिन को अन्तिम दर्शन देने के लिए आये।

अक्ष्यः—( उठ कर ) प्राणों से प्यारी लक्ष्मी ! तुम कहां हो?

लक्ष्मीः—मेरे अराध्य देवता !

( अक्ष्य लक्ष्मी के पास जाते है )

अक्षयः—हाय ! तुम्हें भी काल का ग्रास बनना पड़ा।

( अक्ष्य लक्ष्मी को खड़ा करते हैं, रक्त बहता है )

लक्ष्मी.—जी भर कर देख लेने दो, अपने देवता के अन्तिम दर्शन कर लेने दो।

अक्षय:—( लक्ष्मी को हृदय से लगाकर ) प्रिये ! तुम्हारे रक्त से अक्षय भी रंग गया । ( अक्षय के श्वेत वस्त्रों में रक्त के चिन्ह हो जाते हैं )

लक्ष्मी:—प्राण नाथ !

अक्षय—प्रिये ! लक्ष्मी ! तुम्हारी माता को क्या उत्तर दूंगा।

लक्ष्मी:—नाथ ! शान्त होओ नाथ ! आपकी आज्ञा से ही तो मैं इस महान क्षेत्र में आई हूं। नाथ ! मैंने तो देश के लिए, दीनों की रक्षा के लिए प्राण दिये हैं।

अक्षय.—( चुम्बन करके ) प्रिये ! चन्द्रमुखी ! सच कहती हो, प्राण इसी प्रकार देने चाहियें। मेरी प्यारी लक्ष्मी !- मेरी शिष्या ! आज तुमने मेरे गुरु का कार्य किया है। (कमला का प्रवेश)

कमला:—हाय ! हाय ! ये हत्याकांड ! भइया !-भाभी ! तुम्हारी यह दशा !

लक्ष्मी.—कमला ! मेरी शान्ति में विघ्न न डालो । मैं तुम्हारे भाई की दया से उन के दर्शन कर परलोक जा रही हूं। कमला ! तेरा अटल ब्रह्मचर्यव्रत शुभ हो। धर्म और जाति के लिए तेरा जीवन शुभ हो। आओ बहिन ! एक बार-अन्तिम बार हृदय से मिल लो फिर भाभी न मिलेगी ! (कमला लक्ष्मी के हृदय से लगती है )

लक्ष्मी:—नाथ ! मुझे पृथ्वी पर लिटा दो।

[ पृथ्वी पर लिटाते हैं ]

लक्ष्मी:—कृष्ण बलराम की, कुलांगार कंस से भली प्रकार रक्षा करते रहना। नारद जी ने कृष्ण बलराम को आदित्य युद्ध शैली सिखा दी है। उन के अतिरिक्त युद्ध कुशल कंस को और कोई नहीं मार सकता। शीघ्र ही इस कुलांगार कंस का वध कराना। नाथ! विलम्ब करने से कहीं हमारे संगठन में छिद्र न हो जाय। अब प्रजा इस अत्याचार को समाप्त करने के लिये कटि बद्ध है, देर करने से कहीं उन का उत्साह भंग न हो जाय। शीघ्रता करना नाथ!

अद्दय:—लक्ष्मी तुम इतनी गुणवती हो, इतनी विदुषी हो। यह मैंने आज ही जाना है।

लक्ष्मी:—नाथ! अन्तिम विदा दो।

अद्दय:—विदा! सदा के लिये विदा! चलो प्रिये! मैं भी आता हूं।

लक्ष्मी:—नाथ! ( मृत्यु )

अद्दय:—सदा के लिये सो गई भाभी? ( रोते हैं )

नेपथ्य में—हाय रे मारा मत।

अद्दय:—ये चिल्लाहट कैसी? क्या दुष्टों का मन हत्याओं से नहीं भरा?

कमला:—भइया देखो वह आग लग रही है।

[ सामने गांव में आग का लगना कोलाहल ]

( कुछ सैनिकों का प्रवेश )

अद्दय:—हत्यारे अब गांव में आग लगाना भी शुरू कर दी।

[ कमला के हृदय में तीर का लगना ]

कमला:—ऊह! भइया! भइया ( मृत्यु )

**अक्ष्य:—अबला की हत्या ! हत्यारो ! आओ युद्ध करो !**

{ क्रोध मे पागल हो फुरती से सब का बध करते हैं अचानक कई सैनिक आ जाते हैं। अक्ष्य का वध करते है }

**एक सैनिक:—मिल कर-सब मिलकर इसे मार डालो।**

**अक्ष्य:—आओ, आओ। केवल मृत्यु या विजय चाहता हूं। इस के अतिरिक्त कुछ नहीं। मृत्यु मिलेगी, मृत्यु ही सही।**

{ भीषण युद्ध कई सैनिक मिलकर करते है। अक्ष्य कई सैनिकों का वध कर देते है शेष का मिलकर एक साथ अक्ष्य पर आक्रमण। अक्ष्य गिरता है }

**अक्ष्य:—आओ ! तुम कृतकार्य हुवे। और हम भी कृत-कार्य्य हुवे, जाओ।** ( मृत्यु )

[ सैनिक अकडते हुए जाते है ]

( सूरसेन का उन्मादमय दशा में प्रवेश )

**सूरसेन:—ये हत्याएं ! राज वधु सुजला ! अक्ष्य भी लक्ष्मी भी !** ( अट्टहास करके हसना ) **कमला भी !** ( सिर पकड़ कर उठाते है सिर हिला कर ) **सोने दो। कई रात के जागे हुए हैं। —अरे हत्यारो कुलांगारो ! अगर रक्त की ही प्यास थी तो मेरा रक्त पीना था। आओ मैं युद्ध करुगा। युद्ध नराधम कंस !** ( चारों ओर तलवार घुमाते हैं ) **हें। हें ! भाग गये ? डर गये ? मुझ से नहीं लड़ सके पर मैं तुम्हारा पीछा न छोडूंगा। चलो, चलो, दुष्टों। युद्ध करूंगा मैं युद्ध !** ( भागना )

[ दूसरी ओर से वेणूनाथ व बलराम का प्रवेश ]

वेणुनाथः—यही है ना ? ( चारों ओर को देख कर ) कैसे चुप चाप सो रहे हैं। राहुक सुमन्त सुजला—अक्षय लक्ष्मी कमला कैसे अच्छे सो रहे हैं। कमला ! लक्ष्मी ! मुझ बूढ़े पर तो दया कर सकती थीं। हाय !

बलरामः—इस में दुख काहे का ? इन सबों ने दीनों की रक्षा की है।

वेणुनाथः—ठीक कहते हो। मेरे सर्वस्व मुझ अन्धे के सहारे। बलराम ! बेटा ! भगवान् ने ही भूल की थी। सब को तो दो आंखें देता है और मुझे तीन दीं। और फिर तीनों छीन लीं।

बलरामः—शान्त हूजिये ! शान्त हूजिये !

वेणुनाथः—अक्षय ! अक्षय ! मेरे अक्षय ! हम सब चलेंगे हाय हम सब मरेंगे डूबेंगे लड़ेंगे—( भागना )

बलरामः—ओह ! इतना अत्याचार ! इतना अंधकार ! परमेश्वर !

---

# दूसरा दृश्य

स्थानः—उद्यान ❀ समयः— प्रातःकाल

( मदन मंजरी का एक मृत बालक को लिए हुए प्रवेश )

मदनमंजरीः—यही मार्ग है। यहीं से महाराजा कंस आयेंगे। ( पीछे को देख कर ) वे आ ही जो रहे हैं। मैं आज उन्हें निश्चय कराऊंगी, विश्वास दिलाऊंगी कि यह बालक कृष्ण बलराम के वीर्य से उत्पन्न हुवा है। मुझे कुतिया कहने

वाले धूर्त कृष्ण आज मैं अपने अपमान का पूरा २ बदला लूंगी। ससार में तेरी पवित्र जीवनी को मिथ्या अपवाद के कलक से रग दूंगी। तूने मेरे सुख को, मेरे भावी आमोद को नष्ट भ्रष्ट किया है मैं तेरे गौरव को तेरे चरित्र को धूलि में मिलाऊंगी।

[ कस व मुष्टिक का प्रवेश ]

कंसः-मदनमंजरी यह किसका बालक है? और तुम यहां कैसे ?

मदनमजरी-बलराम के व्यभिचार का फल स्वरूप यह बालक है।

मुष्टिकः-क्या यह सच है?

मदनमजरीः-बिल्कुल ही प्रत्यक्ष है।

कंस-तो क्या यह बालक बलराम से उत्पन्न हुआ है?

मदनमंजरीः-बलराम से नहीं तो कृष्ण से. दोनों का ही तो मेरे साथ कुत्सित सम्बन्ध था।

कंस.—मुष्टिक! मेरे करते कुछ भी नहीं हो पाता। मेरी समस्त चेष्टायें निष्फल जा रही हैं। इस ही एक अभियोग को चला कर उन दोनों का वध करो। मुझे क्षण भर भी चैन नहीं मुष्टिक!

मदन मजरी—मुझे कुतिया कहने वाले कृष्ण! जहां जाऊंगी तेरी निन्दा के गीत गाऊंगी। ( प्रस्थान )

( दूसरी ओर से कुम्भ का प्रवेश )

कंस—मेरे विचार में पहले देवकी और वसुदेव का वध करना चाहिये।

कुम्भः—यह कभी न होगा । कंस ! जो तुम करते हो तनिक उस पर विचार भी कर लिया करो।

कंसः—मैं आप से परामर्श नहीं किया चाहता।

कुम्भः—अस्तुः—परन्तु मेरे होते हुए तुम यह अत्याचार न कर सकोगे। देखता हूं, कौन वीर पृथ्वी पर है जो वसुदेव देवकी का वध कर सकता है। सावधान! पाप! और पाप के प्रतिपक्षियो! सावधान! ( प्रस्थान )

कंसः—देखा, मुष्टिक! देखा । अब महाराजा कुम्भ के भाव बदल रहे हैं हमारे आधीन राजा भी इस आपत्काल में हम से बिगड़ रहे हैं।

मुष्टिकः—मैने आप से पहले ही कहा था कि अपने आधीन राजाओं पर पूरा २ शासन कीजिये।

कंसः—मुझ से भूल हुई । अच्छा मुष्टिक ! आज ही वसुदेव देवकी का वध करना चाहिये।

मुष्टिकः—हाँ, इस से विद्रोही भयभीत हो जायेंगे । परन्तु साथ ही साथ उग्रसैन—

कंसः—हाँ, उन्हें भी मार डालो उन के बल पर भी ये लोग भड़क रहे हैं। चलो मुष्टिक! जो शेष हैं उन्हें भी समाप्त करो। जो होगा सो हो रहेगा। सावधान! सावधान!! कंस के मार्ग में काँटा अटकाने वाला कोई भी नहीं बच सकता ।

( नारद का गाते हुए प्रवेश )

गान

भज गोविन्दम् , भज गोविन्दम् ।

भज गोविन्दम् मूढ़ मति रे ॥

सत पथ पर ला जीवन रथ को ;
बदल तू इसकी कुटिल गति रे ।
सम्भल सम्भल अवकाश है—थोड़ा,
अन्ध कूप मे हो न बसेरा ;
अहकार न कर अब उन्नति का तू,
अवनति निकट तू जान अति रे ।

कंस—भगवन् ! मेरी समस्त चेष्टाओं का कुछ भी परिणाम न हुआ।

नारद—( स्वगत ) हमारे उपदेश को न माना । सत्य मार्ग पर चलना न जाना । ( प्रगट ) अब तुमने क्या निश्चय किया है ? कंस !

कंस—वसुदेव देवकी और पिता उग्रसैन का वध करना ही निश्चय किया है ।

नारद—( स्वगत ) ओह ! ऐसा घृणित विचार ! परन्तु राक्षस के लिए ऊच नीच समान है । ( विचार कर ) अब कृष्ण बलराम भी समर्थ हो गये हैं। दूसरे इस राज्य का कोई प्रतिपक्षी भी नहीं । दोनों भाई ही इस का वध करे, तो श्रेष्ठ होगा । ( प्रगट ) कंस ! तुम उन से न डरो । जो क़ैद में पड़े हैं वे कुछ हानि नहीं पहुचा सकते । कृष्ण को निमन्त्रण देकर उसे यहाँ बुला लो ।

( अक्रूर का प्रवेश )

कंसः—ठीक ! आपका यह परामर्श मेरा बड़ा ही प्रिय है ।

नारदः—( स्वगत ) तेरे नाश के लिए यह औषधि बड़ी ही प्रिय है ।

[ वेणुनाथ का प्रवेश ]

वेणुनाथः—(तलवार निकाल कर) नराधम ! नीच ! कुलाङ्गार देखूँ तो सही तेरा कौनसा दर्प है, तेरा कौनसा तेज है। व्याध ! हिंसक ! आज वृद्ध वेणु तेरे रक्त से अपनी प्यास बुझायेगा। युद्ध कर नीच ! शैतान ! युद्ध कर। ( नारद वेणुनाथ का हाथ पकड़ लेते हैं )

नारदः—शान्त हूजिये। वृद्ध वेणुनाथ ! हमारी आज्ञा मानोगे ?

वेणुनाथः—(नम्रता से) ब्राह्मण की आज्ञा का उल्लङ्घन कौन कर सकता है ? भगवन् ! मैं आपकी आज्ञा अवश्य मानूँगा।

नारदः—बिना तर्क के ?

वेणुनाथः—ब्राह्मण की आज्ञा के सन्मुख तर्क, प्रतिवाद नहीं ठहर सकता।

नारदः—तो आज से तुम मथुरा और मथुरा राज्य के अतिशय शुभचिन्तक हो जाओ।

वेणुः—ओह ! यह क्या किया ?

नारदः—विषाद !—क्या तर्क करने की इच्छा हो आई ?

वेणुः—नहीं, ब्राह्मण की आज्ञा के सन्मुख तर्क करके पाप का भागी नहीं बन सकता।

कंसः—वृद्ध वेणुनाथ ! शोक को छोड़िये। आज से आप मेरी दाहिनी भुजा हो गये। मेरे राज्य में, मेरे हृदय में, मेरे मित्रों में, आप का सन्मान सूर्य के समान होगा। आप शीघ्र कृष्ण बलराम का वध कराइये।

वेणुनाथः—कंस !—

नारदः—तर्क ? फिर प्रतिवाद !

वेणुः—नहीं भगवन् ! एक शब्द भी न बोलूंगा । हाय !

( रोते हैं )

कंसः—महर्षि नारद ! वृद्ध वेणुनाथ अपनी संतान की मृत्यु के शोक में व्याकुल हैं । इन्हें शान्त बना दीजिये । ( मुष्टिक से ) आज का दिन कैसा मनोहर है ! आज सूर्य देव मेरे लिये शुभ संवाद लाया है ! आज की प्रातः काल कितनी सुहावनी है ! क्यों मुष्टिक ?

मुष्टिकः—हां राजन् !

कंसः—( अक्रूर से ) अक्रूर ! भोज वंशियों में तुम्हीं हमारे एक अतिशय हितु हो ! तुम हमारी मित्रता का कार्य करो । आज ही रथ पर चढ कर गोकुल जाओ । कंस के यहां धनुष यज्ञ है यह कह कर कृष्ण बलराम को यहां लिवा लाओ !

नारदः—हां अक्रूर ! अवश्य इस कार्य को करो ।

अक्रूरः—अवश्य करूंगा !

कंसः—तुम धन्य हो ! तुम हमारे मित्र हो ।—मुष्टिक ! उत्सव करो, आनन्द मनाओ ! आज का दिन बडा ही शुभ है ।

[ प्रस्थान, पीछे २ मुष्टिक का प्रस्थान ]

नारद—वेणुनाथ ! उठिये । आप कंस के दास नहीं हैं । आप मथुरा और मथुरा की जनता के शुभ चिन्तक हैं । कृष्ण बलराम की रक्षा करिये, उन से कंस का वध कराइये । जिस से प्रजा पीडन की प्रचण्ड आंधी सदा के लिये नष्ट हो जाय ।

वेणुः—अहा ! समझा । ब्राह्मण के गूढ तत्व को अब समझा । बताइये महर्षि मेरे लिये उपाय बताइये ?

नारदः—शोक को त्याग कर कंस के दर्बार में जाओ ! शस्त्र लेकर कृष्ण बलराम की, उनके शत्रुओं से रक्षा करो। यही उपाय आप के लिये श्रेष्ठ है।

अक्रूरः—धन्य महर्षि नारद ! आप की नीति बुद्धि की प्रशंसा कौन कर सकता है ?

वेणुनाथः—अहा आज युवा अवस्था का तेज मेरे हृदय मे कहां से आ गया ? आज पुराना बल—वही शक्ति शरीर में क्यों व्यापती जा रही है ? चरण छुओ, महर्षि के चरण छुओ !

[ वेणुनाथ व अक्रूर चरण छूते है ]

नारदः—उठो वीरो ! उठो, आज अत्याचार का अन्त है।

---

## तीसरा दृश्य

स्थान—जमना किनारे की घाटी * समय—कुछ दिन चढे।

( कृष्ण, बलराम, अक्रूर तथा ग्वालों का प्रवेश )

कृष्णः—अब हमे विदा दो। यदि हम इस अवसर पर कंस का वध न करेंगे तो फिर अन्याय का नाश करना असम्भव हो जायगा।

बलरामः—हां आज ही चलना चाहिये। किस छल से उस दुष्ट ने निमन्त्रण भेजा है।

कृष्णः-( अक्रूर से ) क्या हमें कंस ने हमारा वध करने के लिए बुलाया है ?

अक्रूर-कंस की राय तो आप के माता पिता का वध करने की थी । परन्तु महर्षि नारद ने आकर इस अनर्थ से बचाया । आपको समर्थ जान कर बुलाया है । आप चलें । उस दुष्ट का वध कर माता पिता को मुक्त करें । प्रजा में हा-हाकार मच रहा है । प्रजा को शान्त करें । ( मनसुख का प्रवेश )

मनसुख-बड़ा हर्ष समाचार है । "महाराजा शूरसेन ने महर्षि नारद के परामर्श से कंस के राज दर्बार में प्रवेश किया है । वे और वृद्ध वेणुनाथ शस्त्र हाथ में लेकर कृष्ण बलराम की रक्षा करेंगे ।

कृष्ण-बड़ा हर्ष समाचार है !-परमेश्वर ! हमें बल दो हमें शक्ति दो कि हम इस अत्याचार का सदैव के लिये अन्त कर दें । हम कंस का विध्वंस करेंगे । माता पिता को मुक्त करेंगे । अन्याय को जड़ मूल से खोदेंगे । एक बात को .

यशोदा-मेरे लाल ! मैं कैसे इस अग्नि में कूदने दूं ! मेरा मन कैसे धैर्य धरेगा ? परन्तु वसुदेव देवकी बन्धन में हैं । जाओ लाल ! जाओ ! इस अधर्मी तथा स्वार्थी राज्य को धूल में मिलाओ । कंस ! अब तू सावधान हो जा । तेरे अत्याचार का अब अन्त होगा

नेपथ्य में-नहीं ! नहीं ! ( सुन्दरा का प्रवेश )

सुन्दरा:-नहीं, नहीं, यह तो बड़े आनन्द का विषय है । स्वर्ग का मार्ग है । धर्म का पथ है । चलो, चलो ।

कृष्ण-हां, मां चलो ।

सुन्दरा:-अये, इस अत्याचार का अन्त होने से पहले ही चले गये। हाय! अद्य! हाय! लक्ष्मी! ( रोना )

कृष्ण:-माँ! शोक को त्यागिये। हम कंस का विध्वंस करने जा रहे हैं।

सुन्दरा:-जाओ! परन्तु इस विध्वंस से वे तो न आयेंगे। जाओ या न जाओ। अद्य! लक्ष्मी!

कृष्ण:-मां! वे परहित में प्राण देकर परलोक गये हैं उन की मृत्यु, मृत्यु नहीं किन्तु जीवन है।

सुन्दरा:-ठीक तो कहते हो! गये, वे चले गये?

बलराम:-हाँ, मां हमें आशीर्वाद देओ।

सुन्दरा -( क्रोध में ) तुम्हें भी खा जायगा। क्या पागल हो गये हो! कृष्ण! तुम्हारे इतने भाई उसने खा लिए, वह अब तुम्हें भी खाने को आ रहा है। वह कंस मनुष्य नहीं ह नर भक्षक है। देखो इधर देखो सावधान! सावधान! वह आ रहा है। मेरे अद्य लक्ष्मी को खाने वाला वह आ रहा है। ठहर! नर पिशाच! नराधम! ठहर कुलाङ्गार! नीच ठहर!

( वेग से प्रस्थान )

यशोदा:-ओह! शोक उन्माद!

कृष्ण:-तब ऐसा ही होगा! कंस! अब शीघ्र ही तेरा वज्र के साथ ध्वंस होगा। हम आ रहे हैं नीच? कुलाङ्गार? हम आ रहे हैं। जल्दी चलो, जल्दी चलो बलराम? विलम्ब न करो? प्रहार करो, दुष्ट नराधम पर प्रहार करो।

{ बलराम का हाथ पकड कर तेज़ी से प्रस्थान<br>धीरे २ सब का प्रस्थान }

---

# चौथा दृश्य

स्थान—कंस का राज दर्बार ❀ समय—दो पहर।

{ कंस राज सिंहासन पर बैठा है। सामने अक्रूर, वेणुनाथ, कुम्भ व मुष्टिक खड़े हैं }

कंस—चोबदार! यह बात बिल्कुल ठीक है?

चोबदार—हां महाराज!

कंस—क्या भला, फिर से तो कहो।

चोबदार—कृष्ण को बिना ही किसी चूं चरा के फाटक के भीतर आ जाने दिया। अगर सूरसेन की लडकी का विवाह अक्षय के साथ न हुआ होता, तो महाराज मैं समझता कि कृष्ण ही सूरसेन राजा के जमाई है।

कंस—क्या?

चोबदारः—सूरसेन की लडकी लक्ष्मी का विवाह अक्षय के साथ हुआ था और खुब हुआ था। मगर वे तो कृष्ण को ऐसे सन्मान के साथ भीतर ले आये जैसे मैं अपने जमाई को अपने साथ बाग की हवा खिलाने ले आया करता हूं।

कंस—फिर क्या हुआ?

चोबदार—राम रे राम! फिर तो उन्होंने एक दम पहरा लगा दिया। बस महाराज आप हुशियार रहिये। सूरसेन ने बिना आपकी आज्ञा लिए ही कृष्ण को दूल्हा बना डाला। बिना राजा के उत्सव मनाना तो भले आदमियों का काम नहीं।

कंसः—अच्छा तुम जाओ! ( चोबदार अभिवादन कर जाता है )

कंस –वेणुनाथ जी ! कितनी अनुचित बात है।

वेणुः--सूरसेन ! तुम धन्य हो !

कंसः--सो कैसे ?

वेणुः—वे धर्म और जाति के भक्त है। और मैं भी धन्य हूं जो महर्षि नारद—आदर्श ब्राह्मण की आज्ञा का पालन कर रहा हूं।

कंसः—वीरो ! जब दोनों बालक यहां आ जाय। तभी उनका वध कर डालना।

अक्रूरः–( स्वगत ) देखते है, कौन इन आदर्श बालकों का वध करेगा।

( सूरसेन के सहित कृष्ण बलराम का गाते हुए प्रवेश )•

गान

वैर विरोध बढ़े जग मे, तब ही जग की सुख नींद घटे है।
अन्याय बढे और पाप चढ़े, तब सत्य मिटे और धर्म घटे है॥
क्लान्त बने, सब अशान्त बने, सब हा ! हा ! हाहाकार करे हैं।
शीतल निर्मल जल डारि सदा, भगवान् सबों के ताप हरे हैं॥

कंसः—सावधान ! वीरो ! सावधान !

कुम्भः—( स्वगत ) नराधम ! नीच कुलांगार ! सावधान तू भी सावधान ! ( तलवार निकाल लेते हैं )

कंसः–आओ वीर बालक ! आओ ! कुशल पूर्वक तो रहे।

कृष्णः—आपकी कृपा के विना—

बलरामः—राजन् ! जब आलस्य का राज्य होता है। लोग माया-प्रकृति के दास हो जाते हैं। तब संसार में अह-

कार स्वार्थ अन्याय होने लगता है और तभी संसार, अत्याचार के अत्यन्त हो जाने से त्राहि २ करने लगता है तब जनता में आत्म तेज की जागृति होती है। एकता के अंकुर उगते हैं।

कंस—ठीक कहते हो! वास्तव में जगत की व्यवस्था ही ऐसी है। क्या किया जाये—तुम आज हमारा निमन्त्रण स्वीकार करके आ गये बडी कृपा की है।

कृष्ण.—हां राजन्! परन्तु ये योद्धा यहां क्यों हैं ?

कंस.—हमने तुम्हारी बडी प्रशंसा सुनी है। तुम बड़े योद्धा हो आज का द्वन्द्व युद्ध हमारे योद्धाओं से करो।

कुम्भ.—( स्वगत ) ऐ जगत्! ऐ मनुष्य जाति धर्मात्मा बालक और पापी योद्धाओं का युद्ध देख ले, परोपकार और दया का, स्वार्थ और हत्या के साथ युद्ध देख ले।

कृष्णः—राजन्! महारानी देवकी आपकी नाते में क्या लगती है ?

कंसः—देवकी हमारी बहिन है। परन्तु—

बलरामः—और उसके साथ में बर्ताव भी बहिन जैसा ही हो रहा है।

कंसः—परन्तु—

कृष्ण.—बस अधिक नहीं। जितना अत्याचार आपकी शक्ति में था उतना अत्याचार कर चुके। अब उसका फल स्वरूप, दण्ड भुगतने के लिये तैयार हो जाओ। इन क्षुद्र प्राणों की ममता त्याग दो कंस!

कंस.—मुष्टिक! मुष्टिक! देखते क्या हो ?

**बलराम**:—आओ ! आओ ! तुम ही प्राण विसर्जन करो अब नहीं बच सकते कंस ! प्राणों की ममता त्याग दो नीच ! कुलांगार ! नराधम !

[बलराम मुष्टिक से युद्ध करते है । मुष्टिक का वध ]

**कंस**:—अक्रूर ! भ्राताओ ! ( कंस के भ्राताओं का प्रवेश )

**कंस**:—पहले देवकी—वसुदेव को मारो !

**अक्रूर**:—( तलवार निकाल कर ) सावधान जो इधर को बढे।

[ अक्रूर व वेणुनाथ कंस के भाइयों को बांधते हे ]

**सूरसेन**:—सावधान ! कोई भी इस युद्ध क्षेत्र में आने की चेष्टा न करना । ( पहरा देते है )

**कृष्ण**:—पिशाच कंस ! बस अब अन्तिम श्वास गिन ले।

{ कूद कर कंस के केश पकड़ लेते हैं । दोनों भाई कंस की छाती पर चढ़ कंस को मारते है । }

---

## पांचवां दृश्य

**समय**:—सायंकाल ❀ **स्थान**:—नारद के आश्रम को जाने वाला मार्ग

**मदन**:—वही हुआ, वही ! जो मैंने पहले कहा था—बिल्कुल वही हुआ—ब्राह्मण का वचन भी कहीं मिथ्या हो सकता है ? जिस पर भी महर्षि नारद के चेलों का-और उन चेलों में श्रेष्ठ मुझ मदन का । किसी काम को शुरू पीछे करो

पहले ब्राह्मण का आशीर्वाद ले लो। ब्राह्मण की महिमा, परमेश्वर को छोड सब से बडी है? इसलिये ब्राह्मण परमेश्वर के भक्त हैं। परमेश्वर की महिमा क्यों बडी है ? इसलिये नहीं कि परमेश्वर बडा है — बल्के इसलिये कि ब्राह्मण उस का भक्त है। कल उग्रसेन को राज तिलक होगा। उस से मुझे क्या ? नही मुझे एक उत्सव में जाने का निमन्त्रण मिला है, वहां मुझ महात्मा मदन को लौकिक धर्म पर कुछ बकना पडेगा।

[ दो स्त्री पुरुषों का रोते प्रवेश ]

दोनों —हाय बेटा ! ( मदन चौंकता है )

दोनों:—हाय—हाय—हाय रे हाय !

मदन:-वाह ! अच्छा अभिनय करते हैं !— अभिनय-हूं अब तो मैं विद्वान हो गया, सस्कृत के चुनीदा २ शब्द बोलता हू। जैसे " अभिनय " वेदों के इन पण्डितों में से शायद दो चार को ही इस का अर्थ याद होगा। और उपयोग ? हू उपयोग तो ठीक २ महर्षि नारद भी नहीं जानते।

पुरुष:—हाय बेटा !

स्त्री —हाय लाल !

मदन.—अरे ! तुम क्यों रोते हो ? क्या हुआ ? बतलाओ तो सही।

स्त्री पुरुष:—हाय ! दुष्ट कंस ने हमारा बेटा भी।

मदन:—सुनो ! अब मत रोओ ! कंस को कृष्ण बलराम ने मार डाला।

स्त्री:—बेटा ! क्या सच कहते हो ?

मदनः—हां ! बिल्कुल ठीक कहता हूं ।

पुरुषः—कंस नहीं मरेगा । कमबख़्त कंस की कहां मौत ?

स्त्रीः—हां ! एक साधु भी ऐसा ही कहता था ।

पुरुषः—चलो ! इस झूठे के पास न ठहरो । हाय बेटा ।

मदनः—ये भी मूर्खाचार्य हैं । अहा मूर्ख—आचार्य कैसी सन्धि है । कल तो मुझे व्याख्यान देना है । आज ही तैयारी कर लूं ( जोर २ से ) स्त्रियो ! भद्र पुरुषो ! पहले परमेश्वर का ज्ञान फिर लोक ज्ञान बतलाऊंगा, ईश्वर साकार है, निराकार है । निर्गुणी है, दुर्गुणी है । वह सर्व स्थान पर है परन्तु दिखाई नहीं देता । तर्क और युक्ति से ईश्वर तुझे देखा परन्तु तू न मिला " व्याख्यान के आरम्भ में ईश्वर प्रार्थना ज़रूर करूंगा ।

( नारद का प्रवेश )

नारदः—अरे ! क्या बक रहा है ?

मदनः—( चौक कर ) हैं ! " घृताधारे पात्रम् " सूत्र कंठ कर रहा हूं ।

नारदः—मूर्ख चल ! आश्रम में आज ऋषि लोग आयेंगे उनके आतिथ्य का सामान कर ।

( मदन दबे पाव जाता है )

नारदः—आकाश से धूलि का अन्धकार मिट गया । शीतल मन्द पवन बहने लगा । अनर्थों की साक्षात् मूर्ति कंस अब इस संसार में नहीं । परन्तु मेरे मानसिक जीवन में क्यों अशान्ति आई ? ब्राह्मण के अध्यात्म कर्म को त्याग, इस भीषण हत्या-स्थल में आना ही इस का मुख्य हेतु जान पड़ता है ।

अब उग्रसेन को राज्य तिलक कराके पुन. समाधि में निमग्न होऊंगा । कई दिन से सुख शय्या पर पड़ा रहा परन्तु मुझे इस सब ने व्याकुल ही बनाया । राज पुरुषो ! तुम दया के पात्र हो । क्योंकि पर्वतों की चोटियों पर समाधि लगाने का आनन्द तुम्हारे भाग्य में नहीं । (प्रस्थान)

---

# छटा दृश्य

**स्थान**—राज दर्बार ❀ **समय**—दो पहर ।

( सिंहासन पर उग्रसेन बैठे हैं । नारद उन्हें मुकुट पहना रहे ह । यत्र तत्र मत्री आदि खड़े हैं )

**नारद**—जब पाप बढ़ जाता है, बलवान निर्बलों का तड़न करने लगते हैं । जब राजा प्रजा का रक्त पीने लगता है तब उन पापियों को धूलि में मिलाने के लिये महान् आत्माएं जन्म लेती हैं । दुष्टों का वध करके धर्मात्माओं को शान्ति देती हैं ।

( वसुदेव, देवकी के सहित कृष्ण बलराम का-प्रवेश )

**उग्रसेनः**—आओ, पुत्री ! ( खड़े हो जाते है ) आओ कृष्ण ! आओ बलराम ! अन्धकार में विद्युत की तरह प्रकाश करने वाले वीर बालको ! आओ । ( कृष्ण बलराम को अपनी गोद में बिठा लेते हैं )

{ वेणुनाथ, सूरसेन, सुन्दरी, का सन्यासी वेश में यशोदा व ग्वालों के सहित गाते हुए प्रवेश }

गान

शांति मिले, तभी क्रांति घटे,
जब आन डटे, भगवान जगत में,

{ सब उग्रसेन के गले में फूल माला पहनाते हैं। उग्रसेन कृष्ण बलराम के गले में माला पहनाते हैं। }

गान

शांति मिले, तभी क्रांति घटे
जब आन डटे, भगवान जगत में ॥
मन मैल मिटे, अज्ञान घटे।
निश्चय उपजै, शुभ ज्ञान भगत में ॥
जय कृष्ण कहो, जय कृष्ण कहो, शुभ राज्य अहो!
शांति को वहो, शुभ स्रोत जगत में ॥

( यवनिका पतन )

# हमारा प्रकाशन

## जातीयतता

इन के मूल लेखक तपस्वी अरविंद घोष हैं। बङ्गला में अनुवादित हो कर अभी छपी है। " ज्योती, प्रेम, आर्य्यमित्र" आदि समाचार पत्रों ने मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। प्रत्येक नवयुवक को इस का पाठ करना चाहिये। अङ्गरेजों की भारत विजय लेख पढ़कर दिल तड़प उठता है। मूल्य केवल ।=)

## मनुष्य के अधिकार

स्वामी सत्यदेव महाराज ने यह पुस्तक बड़े ही मार्के की लिखी है। दस हजार से ज्यादे प्रतियां इस की हाथोंहाथ अब तक बिक चुकी हैं। प्रशंसा करना व्यर्थ है। पृष्ठ ९६ होते हुये भी मूल्य केवल ।=)

## स्वदेश सेवक स्वामी दयानन्द

महर्षि दयानन्द ने सोये संसार को जगा दिया। यूरोप निवासियों तक के भ्रम को मिटा दिया। उन के सम्बन्ध में लिखना व्यर्थ है। इस छोटी सी पुस्तक में उन्हीं के राजनैतिक विचारों का समावेश है। मूल्य =)

पता:—

मैनेजर—विश्व साहित्य भण्डार

मेरठ

# आत्म विजय

—⁐o⁐—

## महत्व पूर्ण उपन्यास छप गया।

सामाजिक दुर्दशा का जीवित जाग्रत चित्र खींचा गया है। पुस्तक पाठ करके पता चल जायगा कि भारतीय महिलायें सत्य पथ पर चल कर कितने कितने महत्वपूर्ण कार्य सम्पादन कर सकती हैं। उन का त्याग संसार में धार्मिकता की ज्योति के फैलाने में कितना अग्रगामी हो सकता है।

प्रत्येक महिला को इस का पाठ अवश्य करना चाहिये गन्दी पुस्तकों को छूना भी पाप समझना चाहिये। सारी पुस्तक शिक्षाप्रद कहानी से भरी हुई है। मूल्य १०० पृष्ठ से अधिक का केवल ।||) बारह आने